को उत्सुक हूं कि क्या मेरा ी'' इंग्लैंड में बिक रहा है। के लड़के और लड़की उसे देखा वाईकिंग पेंगविन काउंटर पर कहा। सू ने उनसे कहा कि ''हम ा नहीं चाहते हैं बल्कि ये उसके ई विश्वास नहीं हुआ कि मेरे जैसा क अंग्रेजी की पुस्तक का लेखक 'मेरी तस्वीर जैकेट में है'' मैंने किया और किताब की दुकान से

क भीड़ भरी बस से नारेबाजी हमें सूचना दी कि, ''यह प्रदर्शन है।'' लेबर पार्टी अपेक्षा किराये की भीड़ जमा '' कहानी की परतें खुलती हैं। खिलाफ शांतिपूर्ण प्रदर्शन एकाएक

ड़िंगक हो गया। इसकी शुरुआत डाउनिंग स्ट्रीट केन वास्तविक संघर्ष ट्रैफलगर रीब हुआ। पुलिस और कैमरामैनों और मिसाईल फेंके गये। कारें जला तोड़कर लूट ली गईं। यह सब लंदन ली जैसा लगने लगा।

वापिस लौटते समय गति धीमी जगह सुस्ताने के लिए रुकना पड़ा। वर्षों में मैं इतना अधिक वृद्ध तो नहीं आ निश्चित रूप से मेरे जूतों के कारण न्हें मैं भारत में बहुत अधिक नहीं भी हो मैंने सू एपस्टिन को 'एस्सी व को रोको) दिखाने के लिए रास्ता बदला। यह यीशू के साथ मेडोना की २० फीट ऊंची आकृति है जो कि एक लड़के की तरह अपने हाथ फैलाए हुए हैं, मानो सलीब पर लटकी हो।

स्कॉच के दो पैग मेरा उत्साह बढ़ा देते हैं। बिली के साथ उसके मित्र एयर इंडिया के नरेन्द्र ओबेराय हैं। हम रात्रि- भोज के लिए घर से मुश्किल से १०० गज दूर इटालियन भोजनाय 'ला बोसिलोना' में जाते हैं। इटालियन होने के बावजूद वहां के ज्यादातर कर्मचारी स्पैनिश या पुर्तगाल हैं। एक शोख अधेड़ स्पैनिश परिचारिका मेरी दाढ़ी पर हाथ फिराती है जबकि दूसरे लोग मीनू देख रहे होते हैं।

वह इस बात से प्रभावित है कि मैंने बिना मीनू लैसेग्ना का आर्डर दिया। और अपनी पसंदीदा इटालिन शराब बोरलो। वह ऐसे ग्राहकों को पसंद करती है जो जल्दी अपना मन बना लेते हैं। फिर उसे महसूस हुआ कि मेरे दो दाढ़ी वाले साथी अपने

बेहतर नींद लाती है।

भ्रष्टाचार का पुल

वर्षों तक लंबी दूरी की हवाई यात्रायें बाद मैंने समय गुजारने का अपना एक ईजाद कर लिया है। फिल्में देखने का श होने के कारण शायद ही कभी, उनके द्वा जहाज पर दिखाई जाने वाली फिल्में देखन सामान्यतः उर्दू या अंग्रेजी की कविताओं य शेक्सपियर के नाटक साथ ले कर च

पढ़ते- पढ़ते जब थक जाता हूं तो अपनी कर उन कविताओं को याद करने की करता हूं जो कभी मेरी पसंदीदा थी। उर्दू में यह इकबाल के देहात के प्रति अर्पित कवि

इसके तुकबंदी का तरीका समझने में दाना तू खेती भी तू, बारान भी तू, हा इत्यादि। अंग्रेजी में यह या तो वड् सालिटरी रीपर या डैफोडिल्स, गैन्स सीफिवर (मुझे फिर से समुद्र के पास जा अकेला समुद्र और आसमान इत्यादि) की नाइटिंगेल। यह चकित कर देने व कि कैसे एक पंक्ति दुहराने के बा पंक्तियां याद आने लगती हैं जब तक पूरी कविता फिर से तोते की तरह जाती। एक निद्रारहित रात्रि गुजारने बेहतर तरीका नहीं हो सकता।

इस बार मेरे पास मालती राव द्वा लघु उपन्यास 'द ब्रिज' है। यह मा मुझे तब दी जब वह मेरी बाजू पर ' बांधने आई थीं। ''मेरे विचार से य उपन्यास है। अगर आप सहमत

ठेके
जाती है
लिए मुरा...
तारा के सा...

बेचारा- अमीर मे...
चित्त हो जाता है। ...
होता है इसकी यह एक...
अध्यापिका होने के कार...
उपयोग करने से बच नहीं पाई है। चरित्र वास्तव में जीवन्त नहीं हो पाये हैं। फिर भी कहानी तक पाठक का ध्यान उलझाये रखती है।

वातानुकूलित नरक

मृत्यु शैया पर पड़े एक अमीर आदमी ने अपनी पत्नी से कहा कि उसे बिना कोई कपड़ा पहनाए दफनाया जाये। "मुझे पता है, कि मैं किस रास्ते जा रहा हूं" उसने स्पष्ट किया, "मुझे वहां कपड़ों की आवश्यकता नहीं होगी।"

उसकी मृत्यु के बाद उसकी पत्नी ने अपना वादा निभाया। कुछ दिनों बाद जब उसकी विधवा एक शाम सोने की तैयारी कर रही थी, उस व्यक्ति का भूत खिड़की से प्रविष्ट हुआ और कहने लगा कि "प्रिय मेरे सर्दियों का अन्डरवियर, ट्वीड ओवरकोट दे दो। अब नर्क में बहुत अधिक अमीर लोग हैं और उन्होंने वहां एयर-कंडीशनर लगवा दिया है।"

...मानउल्लापुरा (आजाद पार्क) मुहल्ले में

सांस्कृतिक प्रकाशन माला –
तृतीय पुष्प

प्राणायाम

स्वामी आनन्दानन्द
यौगिक चिकित्सा व अनुसंधान केन्द्र
बापूनगर–जयपुर

आनन्दानन्द
यौगिक चिकित्सा व अनुसंधान केन्द्र,
बापूनगर, जयपुर-४ (राजस्थान)

प्रथम संस्करण
१९७०

मूल्य : रु० १.५०

प्राप्ति-स्थान :

१. यौगिक चिकित्सा व अनुसंधान केन्द्र
बापूनगर, जयपुर-४ (राजस्थान)

२. प्राकृतिक चिकित्सालय
बापूनगर, जयपुर-४ (राजस्थान)

मुद्रक : जयपुर प्रिण्टर्स, जयपुर
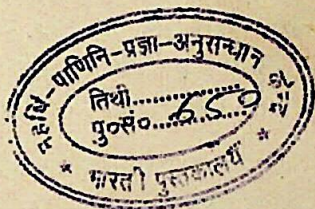
दो शब्द

प्राणायाम अष्टांग योग का चौथा अंग है। इस पुस्तक में स्वास्थ्य रक्षार्थ प्राणायाम की उपयोगिता दर्शायी गई है तो भी इसकी आध्यात्मिकता की महत्त्वपूर्ण भूमिका अस्वीकार नहीं की जा सकती। क्योंकि ऋषि-मुनि-प्रणीत योग-पद्धति का एक अमिट प्रभाव स्वतः ही अभ्यासी एवं प्रयोगकर्त्ता पर पड़ता है तथा यह प्रभाव लोगों को शान्त, समाहित चित्त, धीर-स्थिर, मितभाषी, सत्यवादी, श्रद्धालु तथा जितेन्द्रियता के पथ पर ले जाता है : काम-क्रोध, लोभ-द्वेष व हिंसामय वातावरण से मुक्त रखता है। इसलिए साधक को भी प्राणायाम अभ्यास के लिए योग्य बनना अवश्यंभावी है। यन्त्र के आवर्तन की भांति केवल लक्ष्यहीन साधन से पारमार्थिक साधना संपन्न नहीं होती। शरीर और मन को एक ही सूत्र में लाने के लिए सात्विक भोजन की अनिवार्यता तो है ही, साथ में हीन आचार-विचार तथा व्यसन से भी साधक को मुक्त रहना पड़ता है। जैसे गांजा, भांग, सुल्फा, तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट, मदिरा आदि मादक द्रव्यों के सेवनकारी, कामोत्तेजक—संगीत श्रोता व साहित्य पाठक, अश्लील नाटक तथा चलचित्रदर्शक, असंयत ब्रह्मचर्य तथा चरित्रहीन व्यभिचारी व्यक्ति प्राणायाम एवं योग-अभ्यास करने के अधिकारी नहीं बन पाते। वर्तमान समय में लगभग समग्र विश्व से योग के प्रति प्रबल आकर्षण, जिज्ञासा तथा अनुसन्धितता लेकर मुमुक्षुजन भारत में आरहे हैं। परन्तु जिज्ञासा के उत्तर में योग के अन्तिम पाठ "समाधि" को ही व्यक्त किया जा रहा है। अथच प्रारंभिक व आवश्यक पाठ यम, नियमादि को अज्ञात रखा जा रहा है। इससे मुमुक्षुजन की आकांक्षा पूरी नहीं हो पा रही है। निराश हृदय में अविश्वास एवं अवज्ञा के साथ योग को महत्त्वहीन संज्ञा देकर विद्रूप करते हुए उन लोगों को लौटना पड़ रहा है। किन्तु योग पूर्ण है, चिरन्तन है, कामधेनु है, त्रुटिविहीन है। त्रुटि तो प्रयोगविधि में हो सकती है, योग के

प्रवर्त्तक ऋषि-मुनि आत्मद्रष्टा, दूरद्रष्टा, विज्ञानविद् थे। अतः साधक अपनी त्रुटियों पर ध्यान रखते हुए उपर्युक्त व्यसन आदि से स्वयं को पृथक् रखें। अत्यधिक द्वन्द्वयुक्त प्रवृत्ति, अनीति, कुरीति आदि से पृथक् ही रहें।

प्राणायाम-अभ्यासकर्त्ता अपने हृदय, फुप्फुस, रक्तचाप आदि शारीरिक रोगों के सम्बन्ध में पहले निःसन्देह होकर ही अभ्यास में प्रवृत्त होवें, नहीं तो लाभ की अपेक्षा हानि पहुँचने की संभावना अधिक रहेगी। पहले ही बताया गया है कि योग-पद्धतियाँ हमारे ऋषि-मुनियों के वैज्ञानिक प्रयोग की अवदान हैं। अतः कोई दम्भ तथा हठधर्मिता के साथ अभ्यास द्वारा इसका दुरुपयोग करके वैज्ञानिक अवदान की अवमानना न करने की विनती लेखक की ओर से सदैव के लिए है। पुस्तक तो लक्ष्य तक पहुँचने का एक सेतुस्वरूप है। सेतु अतिक्रमण करने के पूर्व वांछनीय कलाकौशल तथा शिक्षण योग्य अधिकारी के समक्ष होना अति आवश्यक होता है – फलतः साधक तथा अभ्यासकारी गहरे अध्ययन-मनन एवं अभ्यास द्वारा इससे लाभ उठाकर मेरे प्रयत्न को सफल करें यही मेरी सानुनय प्रार्थना है।

जिन योग-प्राणायाम अभिलाषी महानुभावों ने इस पुस्तिका के लेखन हेतु मुझे सतत प्रेरणा प्रदान की है एवं जिन उदारशील सज्जनों ने मेरे साथ आर्थिक भार वहन कर प्रकाशन-पथ सुगम कर दिया है उन सभी प्रिय शुभचिन्तकों के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ।

अन्त में विज्ञजनों से नम्र निवेदन है कि इस पुस्तिका में रही त्रुटियों को क्षमा करते हुये अपने अमूल्य सुझावों द्वारा मुझे अनुगृहीत करें, ताकि अगले संस्करण में संशोधन व परिवर्धन किया जा सके।

मकर संक्रान्ति, १९७०।

आनन्दानन्द

अनुक्रमणिका

प्राणायाम

प्राणस्य आयाम—प्राण+आ (उप०)+√यम्+घ ञ्=प्राणायाम । प्राणायाम=प्राण+आयाम=षष्ठी तत्पुरुष समास—प्राणस्य आयाम ।

आयाम = (आङ्—उपसर्ग)+√यम्+घ ञ् (आ. व) यानी प्राणायाम में छठी तत्पुरुष समास है। इसके टुकड़े प्राण का आयाम (संस्कृत में प्राणस्य आयाम) होता है। प्राण पाँच वायु में से एक है। आयाम शब्द में आ (आङ्) उपसर्ग है और यम् धातु है जिसका अर्थ नियमन होता है। यम् धातु में घ ञ् प्रत्यय लगने से बनता है। अतः इसका अर्थ है "प्राणवायु का नियमन—नियंत्रण—अनुशासन"।

प्राणशक्ति

हमारे शरीर की प्रत्येक क्रिया जैसे उठना, बैठना, बोलना, चलना, देखना, सुनना, आदि दैनन्दिन कार्य-प्रणाली में रक्त के साथ प्राणवायु का विचरण तथा पूर्ति होती रहती है। किसी भी कारण से देहयंत्र में खराबी तथा शरीर पंगु हो जाने पर भी प्राणवायु की क्रिया धमनियों द्वारा शरीर में संचरित होती रहती है। इससे शरीर में नई स्फूर्ति—नई ताज़गी आ जाती है। स्नायु की यह शक्ति ही शरीर के अन्दर प्राण है और अभ्यास द्वारा इसको अपने वशीभूत करना अर्थात् प्राणवायु का नियमन करना ही प्राणायाम है।

दैनन्दिन कार्य-प्रणाली जैसे चलना, दौड़ना तथा कठिन परिश्रम, प्रयोजन के अतिरिक्त भोजन, शयन, उपवेशन, मैथुन आदि के समय मनुष्य अपनी श्वास-प्रश्वास की गति पर ध्यान नहीं रखते हैं। अथच इन सब कारणों से हमारे श्वास-प्रश्वास की गति पर अस्वाभाविक प्रभाव पड़ता है, हमारी प्राणशक्ति का अपचय होता है। अतः जिससे प्राणशक्ति का अपव्यय न हो और श्वास-प्रश्वास की अनियमितता न होने पावे, इसके प्रति ध्यान रखना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। इसके लिए प्राणायाम ही एक उत्तम साधन है।

श्वास-प्रश्वास को अपने वशीभूत करते हुए उसकी संभावित अव्यवस्थित गति का अवरोध करके, इच्छानुसार उसे फैलाना, बढ़ाना अर्थात् चाहे जितने समय तक प्राण को अपने अन्दर या बाहर रखने के अभ्यास से प्राणशक्ति अपने वश में आ जाती है। यह प्राणायाम प्रक्रिया द्वारा किया जा सकता है।

हम सर्वदा श्वास लेते हैं किन्तु उससे पूर्ण मात्रा में प्राण प्राप्त नहीं कर पाते हैं। यदि स्वच्छ खुले वायुयुक्त स्थान पर नियम तथा विधिपूर्वक श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया का अभ्यास किया जाय तो परिमितरूप में अपने अन्दर प्राणशक्ति को प्राप्त किया जा सकता है।

प्राण चराचर सृष्टि में एक ईश्वरीय शक्ति है। वायु, जल, सूर्य-किरणों और अन्न से जीवों को प्राणशक्ति मिलती है। विशेषतः वायु अर्थात् श्वास-प्रश्वास व्यतीत जीव बच नहीं सकते, इसलिए यह ईश्वर-प्रदत्त ईश्वर की भांति अदृश्य शक्ति है। चर-अचर सब प्राणियों में जैसे मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि में श्वास-प्रश्वास क्रिया दिखाई देती है वैसे ही वृक्ष, वनस्पति आदि में भी प्राण हैं। ऑक्सीजन छोड़ना और

कार्बन डाईऑक्साइड ग्रहण करना वृक्ष-वनस्पति में निहित जीवन-शक्ति का प्रमाण है।

हमारे प्राचीन मुनि-ऋषियों ने प्राणायाम की विधि शरीर के नियमों को सूक्ष्मरीति से निरीक्षण (अवलोकन), विचार तथा अध्ययन द्वारा अपनाई है।

मनुष्य यदि अपनी श्वास-प्रश्वास क्रिया पर अनुसंधित्सु मन लेकर ध्यान दे तो ज्ञात हो जायगा कि कुछ समय तक उसका दक्षिण नासारन्ध्र पूर्णरूपेण क्रियाशील है एवं उस समय वाम नासारन्ध्र पूर्णतया सक्रिय नहीं है। फिर कुछ समय व्यतीत होने पर वाम नासारन्ध्र पूर्णरूपेण सक्रिय हो जाता है एवं दक्षिण नासारन्ध्र में पूर्ण सक्रियता नहीं रहती है। अवश्य-मेव शरीर की प्रकृति के अनुसार इस विधि का तारतम्य बना रहता है।

सूर्य-चन्द्र तत्त्व–

योगशास्त्र में दक्षिण नासारन्ध्र को पिंगला अर्थात् सूर्य नाड़ी एवं वाम नासारन्ध्र को इड़ा अर्थात् चन्द्र नाड़ी की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार संज्ञा देने का तथ्य यह है कि दक्षिण नासारन्ध्र द्वारा शरीर में प्रविष्ट वायु सूर्य स्वभाव होने से उष्णता उत्पन्न करती है तथा वाम नासारन्ध्र द्वारा प्रविष्ट वायु चन्द्र स्वभाव होने के कारण शरीर में शीतलता उत्पन्न करती है।

सूर्य-तत्त्व तथा चन्द्र-तत्त्व शरीर में जिस परिमाण में संचित होते हैं उसी परिमाण में शरीर में आरोग्यता की पृष्ठभूमि रहती है। शरीर में सूर्य-तत्त्व अधिक और चन्द्र-तत्त्व न्यून होता है तो उष्णता और पित्त संबंधी रोगों की प्रधानता रहती है। इसी प्रकार शरीर में चन्द्र-तत्त्व के आधिक्य तथा सूर्य-तत्त्व की

न्यूनता होने से शीतलता संबंधी रोगों का बाहुल्य रहता है। अतः जब मनुष्य-शरीर में दोनों तत्त्व समरूप में रहते हैं तब मनुष्य नीरोग रहता है। इसलिए प्रकृति समय-समय पर दोनों नासारन्ध्रों को पूर्णरूपेण क्रमशः खोलकर तथा अवरुद्ध करके शरीर को सूर्य-चन्द्र दोनों तत्त्वों की समानता प्रदान करती रहती है। यदि किसी कारण से उपर्युक्त स्वाभाविक क्रम में व्यतिक्रम होता है तो शरीर नाना रोगों से आक्रान्त होने लगता है।

पिंगला या इड़ा नाड़ी यदि दीर्घ समय तक अखण्ड रीति से चलती रहती है तो मनुष्य की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है। इड़ा अखण्ड रीति से चलती रहे तो शरीर में अधिक शीतलता बढ़ती है जिससे हृदय पर प्रभाव पड़ता है। परिणामस्वरूप हृदय की गति अवरुद्ध हो जाती है और इसी प्रकार पिंगला नाड़ी के अखण्ड रीति से चलते रहने पर शरीर में उष्णता अधिक बढ़ जाती है जिसका प्रभाव हृदय और मस्तिष्क के ज्ञान-तन्तुओं पर पड़ता है। रक्तचाप में अधिक वृद्धि हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप हृदय को मस्तिष्क की ओर अत्यधिक रक्त-प्रवाह करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। मस्तिष्क में अतिरिक्त रक्त-प्रवाह बढ़ने से हृदय की गति अवरुद्ध हो जाती है।

अधिक परिश्रम करने से शरीर में उष्णता बढ़ जाती है। इस स्थिति में इड़ा नाड़ी द्वारा श्वसन क्रिया हो तो शीत-उष्ण में समानता आ जाती है।

श्वास परिवर्तन

श्वसन क्रिया परिवर्तित करने की साधारण प्रक्रिया यह है कि कुछ समय दाहिनी करवट में शयन करें तो बायीं अर्थात् इड़ा नाड़ी की गति बढ़ जाती है और कुछ समय बायीं करवट में शयन करने पर दाहिनी अर्थात् पिंगला नाड़ी की गति बढ़ जाती है।

यदि करवटस्थ रहने के समय तकिया बगल में दबाकर रखा जाय तो अति शीघ्र ही श्वास क्रिया परिवर्तित हो जाती है।

चलते-फिरते या बैठे हुए श्वास की गति में परिवर्तन चाहें तो रूई या कपड़े के छोटे टुकड़े द्वारा छोटी-सी पुटली बनाकर नासारन्ध्र में प्रविष्ट कराकर किया जा सकता है।

रात्रि में पिंगला नाड़ी चलाते हुए शयन करना लाभदायक रहता है, क्योंकि सायंकाल से (रात्रि के समय) वायुमण्डल साधारणतया शीतल होने लगता है। अतः पिंगला नाड़ी चलायमान रहने से हृदय में समाविष्ट चन्द्र-तत्त्व समस्थिति में हो जाता है। अवश्य, सारी रात्रि मनुष्य एक करवट से नहीं सो सकता। प्रकृति के नियमानुसार ही निद्रावस्था में मनुष्य स्वयं करवट अदल-बदल कर लेता है। किन्तु प्रातःकाल निद्रा भंग के उपरान्त कुछ समय तक दाहिने करवट में सोने के पश्चात् शैया त्याग करना लाभदायक रहता है।

अष्टांग योग में प्राणायाम

प्राणायाम अष्टांग योग का चौथा अंग है। साधारणतया प्राण-अपान वायु का संतुलन अर्थात् नियन्त्रित श्वास-प्रश्वास द्वारा अन्तर्शुद्धीकरण क्रिया, प्राणायाम माना जाता है। वहिरंग का मल स्नानादि से धोया जाता है। किन्तु अन्तरंग अर्थात् मन का मल स्नान आदि से नहीं धोया जा सकता। संसार में सबसे चंचल कोई वस्तु है तो वह है मन, मन की गति असीम है। साधारणतया वायु की गति से गति की तीव्रता का निरूपण होता है। किन्तु मन वायु से भी तीव्र गति से चलता है, जो कि निरूपण की सीमा से बाहर है। चोरी, डाका डालना, खून खराबी, व्यभिचार आदि अकृत्य-कुकृत्य की परिकल्पना पहले मन में होती है। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि इन्द्रिय-ग्राह्य वस्तुओं का स्वाद सबसे पहले मन में भांपा जाता है। हिंसा, राग, द्वेष, ईर्ष्या, घृणा, पीड़न, ताड़न आदि की प्रतिकार-भावना पहले मन में ही चरितार्थ हो जाती है। लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि का सुखानुभव पहले मन में ही होता है। कामवासनादि भोग शरीर से पूर्व मन द्वारा हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप उपर्युक्त सभी विषयों के विषजाल में लोग आबद्ध होकर सुख के बदले में दुःख ही वरण कर लेते हैं। ऐसे मन जैसी सूक्ष्म इन्द्रिय को वश में लाना अति कष्टसाध्य है, भले ही जंगल के हिंसक जन्तु वश में लाए जा सकते हैं।

हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि व योगियों का जीवन "सर्वभूत हितेरता:" था। उन मनीषियों का ध्येय ही था मानव कल्याण।

वे मनीषी मानव कल्याण के लिए नानाविध पद्धतियाँ प्रवर्तित कर गये हैं। "योग" विश्व के लिए उन मनीषियों की एक अनुपम देन है। प्राणायाम योग की चौथी सीढ़ी है। इसका प्रधान उद्देश्य है मन को वशीभूत करना।

योग कई प्रकार के हैं—जैसे मन्त्र योग, लय योग, राज योग, हठ योग, ज्ञान योग, भक्ति योग, कर्म योग आदि आदि। यद्यपि इन सभी योगों की साधन-प्रणालियों में भिन्नता है किन्तु लक्ष्य एक ही है "आत्म तथा ब्रह्मसाक्षात्कार।" सभी साधनाओं के लिए मानसिक स्थिरता की आवश्यकता होती है। योग-मार्ग के उच्चतम सोपान की ओर स्वयं को ले जाने के लिए मन को वशीभूत करना अनिवार्य होता है।

ऋषि पतंजलि ने अपने योगसूत्र में कहा है कि.......... "योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:" अर्थात् चित्तवृत्तियों को रोकना ही योग है।

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि—योग के ये आठ अंग हैं।

पहला अंग यम :— अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इन पाँच भागों में विभाजित है, जिसकी व्याख्या में सुन्दर, प्रसारित मन और शरीर को सन्नियुक्त करने का उपाय किया गया है।

दूसरा अंग नियम :— नियम भी पवित्रता, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान इन पाँच भागों में विभाजित है। इसमें शुचिता और आत्मसंतोष द्वारा स्वयं को योगाभिमुखी किया जा सकता है।

इससे बाहर और अन्दर की शुचिता, आत्मतुष्टि, अपने कर्त्तव्य-सम्पादन के लिए कष्ट-सहन और वेद, पुराण आदि

उत्तम शास्त्रग्रन्थों के अध्ययन द्वारा नैतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लिए स्वयं को उत्सर्ग करने की प्रेरणा मिलती है।

तीसरा अंग आसन :– आसन में शरीर को नीरोग, स्वस्थ, स्थिर और दृढ़ रखने के लिए अनेक शारीरिक व्यायामों का प्रावधान है, क्योंकि स्वास्थ्य ही जीवन माना जाता है। स्वास्थ्यहीन व्यक्ति जीवन-संग्राम में कुछ नहीं कर सकता है। आसनों द्वारा शरीर की समस्त ग्रन्थियों, सन्धिस्थलों और नस-नाड़ियों को "सतेज कर्मक्षम" रखा जाता है। मनुष्य दीर्घजीवी होता है।

मनुष्य जब शारीरिक, मानसिक, नैतिक गुणों में गुणान्वित हो जाता है तब स्वतः ही आध्यात्मिक उन्नति की ओर स्वयं अग्रसर होने लगता है।

योग का चौथा अंग है प्राणायाम। प्राणायाम आध्यात्मिक साधन तथा आत्मसाक्षात्कार में पूर्णता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को तैयार करता है। योगशास्त्र में प्राणायाम अति महत्त्व रखता है जो कि विस्तृत व्याख्या सापेक्ष है। "कुण्डलिनी योग" नामक पुस्तक में प्राणायाम की विस्तृत आध्यात्मिक व्याख्या की गई है, किन्तु यह पुस्तक शरीर पर प्रभाव तथा स्वास्थ्य रक्षार्थ प्राणायाम की उपयोगिता पर लिखी जा रही है।

मानव शरीर एक विराट् कारखानास्वरूप है। कारखाना जैसे अनेक यन्त्र, कल-पुर्जों के सहयोग से चलता है वैसे ही मानव-शरीर भी अस्थिसंस्थान, सन्धियों, मांसपेशियों, रक्तवहा संस्थान, श्वासोच्छ्वास संस्थान, पोषण संस्थान, मल-मूत्र वाहक संस्थान, नाड़ी संस्थान आदि के सहयोग से चलता है। प्रत्येक संस्थान अपने-अपने स्थान पर महत्त्व रखते हुए परस्पर सहयोगिता द्वारा देहरूप कारखाने को चलाता है। इनमें से

श्वासोच्छ्वास संस्थान शरीर में अति महत्त्वपूर्ण कार्य में व्यस्त रहता है। श्वास-प्रश्वास अर्थात् स्पंदन ही शरीर जीवित रहने का प्रमाण है। स्पन्दनहीन शरीर मृत माना जाता है। मानव-शरीर प्रकृति की अद्भुत देन है। शरीर को कर्मक्षम रखने के लिए बहुत सी रासायनिक क्रियाओं द्वारा अनेक प्रकार के पदार्थ शरीर में बनते रहते हैं। इनमें से कुछ पदार्थ ऐसे हैं जिनके शरीर के भीतर रहने की आवश्यकता नहीं है वरन् अधिक समय तक पड़े रहें तो अनेक रोग होने की संभावना रहती है। इस कारण से इन पदार्थों को बाहर निकालने का प्रबंध शरीर में ही किया गया है। कई ग्रन्थियों का यह कार्य है कि जब रक्त उनमें प्रवेश करेगा तब उनमें से हानिकारक पदार्थों को प्रश्वास, मल, मूत्र, प्रस्वेद आदि द्वारा शरीर से बाहर निकाल दे।

प्राणायाम श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया का नामांतर है। यह प्रक्रिया पूरक, कुंभक, रेचक द्वारा पूर्ण होती है। योगशास्त्र में कई नाड़ियों का वर्णन है। इनमें से इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना योग-मुमुक्षु की परिचित नाड़ियाँ हैं। प्राणायाम के साथ ये तीनों नाड़ियां संबंधित हैं। साधारण अर्थ में इड़ा वाम नासारन्ध्र और पिंगला दाहिना नासारन्ध्र है। प्राणायाम-प्रकरण में इड़ा–पिंगला के स्थान पर वाम और दाहिना नासा-रन्ध्र शब्दों का ही प्रयोग किया गया है। श्वास-प्रश्वास के साथ फुफ्फुस संबंधित हैं। इसलिए यहाँ फुफ्फुस का गठन, अवस्थिति और कार्यक्रम के सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण देने का प्रयास किया जा रहा है।

फुफ्फुस

फुफ्फुस दो होते हैं। वे हृदय के दाहिनी और बायीं ओर रहते हैं। दोनों फुफ्फुसों की तलियाँ गहरी अर्थात् नतोदर

होती हैं। फुफ्फुस स्पंज जैसा मुलायम होता है। उसमें अनेक छोटे-छोटे अंश होते हैं जो आपस में सौत्रिक तंतुओं द्वारा जुड़े रहते हैं। यह प्रणाली कई कोठरियों से सम्बन्ध रखती है जिसका नाम वायु मन्दिर (Infundibulum) है। जैसे एक मकान में छोटी-छोटी कई कोठरियाँ होती हैं वैसे ही एक वायु मन्दिर में अनेक कोठरियाँ होती हैं जिनको वायु कोष्ठ (Air cell) कहा जाता है। वायु मन्दिर का आकार मधुमक्खियों के छत्ते से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। एक सूक्ष्म वायु-प्रणाली के अन्दर वायु बहुधा एक से अधिक मन्दिरों में जाया करती है। अनुमान है कि दोनों फुफ्फुसों में वायु मन्दिरों की संख्या १६ से १८ करोड़ के लगभग होती है। वायु का फुफ्फुसों के अन्दर जाना और फिर बाहर निकलना श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया द्वारा होता है। श्वास द्वारा रक्त की शुद्धि होती है। शुद्ध वायु में ऑक्सीजन का एक भाग तथा नाइट्रोजन के ४ भाग होते हैं। इन दोनों के मिलन से वायु बनती है। इन दोनों गैसों का रासायनिक संयोग नहीं होता। इनका केवल मिश्रण होता है। श्वास के साथ पहले वायु भीतर खींची जाती है फिर प्रश्वास के साथ वायु को बाहर निकाल दिया जाता है। जब वायु फुफ्फुसों के अन्दर जाती है तो उसमें सम्मिलित ऑक्सीजन को रक्त ग्रहण कर लेता है और अपनी कार्बन डाइऑक्साइड को वायु में मिलाकर बाहर निकाल देता है। अर्थात् फुफ्फुस शुद्ध वायु ग्रहण करके विषैली गैस को त्याग देते हैं। इस प्रकार वायु फुफ्फुस के अन्दर जाती है तथा आती है। प्रति मिनट में लोग १६ से २० बार श्वास-प्रश्वास करते हैं। कार्बन डाइ-ऑक्साइड मिश्रित रक्त शरीर के सब भागों में से एकत्रित होकर हृदय के दाहिने ग्राहक कोष्ठ में दो महाशिराओं द्वारा पहुँचा दिया जाता है। हृदय उस रक्त को उन शिराओं में पहुँचाता है

जो वायु कोष्ठ की दीवार में रहती हैं। यहाँ इस रक्त में से बहुत सी कार्बन डाइऑक्साइड बाहर निकल जाती है और उसके स्थान पर ऑक्सीजन आ जाती है। फुफ्फुस में केवल इन गैसों की अदला-बदली ही नहीं होती, परन्तु कुछ जल भी वाष्परूप में वायु द्वारा शरीर से बाहर निकलता है। वाष्प में अतिरिक्त रूप से कुछ उड़नशील विषैला पदार्थ भी वायु द्वारा बाहर निकल जाता है। जिस प्रकार हृदय के पास रक्त रहते हुए भी अपना पोषण अलग से ही प्राप्त करता है, उसी प्रकार फुफ्फुस भी उस रक्त से जो उसके पास शुद्ध होने के लिए आता है अपना पोषण नहीं करता। हृदय जितना रक्त फुफ्फुस को भेजता है, वह उतना ही शुद्ध करके लौटा देता है। उसको पोषण करने के लिए दूसरे ही स्थल से अन्य नलिका द्वारा रक्त आता है जो वृहद् धमनी की शाखा है। यह कार्य रात-दिन चलता रहता है चाहे हम सुप्तावस्था में हों अथवा जागृत में। वह न केवल प्राण-वायु का ही सदा संचार करता रहता है, वल्कि शरीर की उन सब आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कार्य करता है जिनको उत्पन्न करने की शक्ति स्वयं केन्द्र में है। कार्बन डाइ-ऑक्साइड केन्द्र को उत्तेजित करने वाली मुख्य गैस है। इसकी मात्रा परिमाण कम होने से केन्द्र की क्रिया भी कम हो जाती है।

साधारणतया श्वास-प्रश्वास के समय वक्षःस्थल से लेकर उदर तक की मांसपेशियाँ क्रमशः ऊपर और नीचे की ओर जाती हैं। प्राणायाम में तो गहरा श्वास लिया जाता है, जिसका प्रभाव दोनों फुफ्फुसों पर पूर्णरूपेण पड़ता है। प्रत्येक प्राणायाम में स्पञ्ज की भाँति दोनों फुफ्फुस पूर्णतया फूल जाते हैं जिससे संलग्न हजारों रक्तवहा नाड़ियों में उत्तेजना आ जाती है। प्राकृतिक मालिश प्रारम्भ हो जाती है। यदि किसी कारण से रक्त कहीं भी जम गया होगा तो इस उत्तेजना तथा प्राकृतिक

मालिश से रक्त-संचालन ठीक होने लगता है। केवल यही नहीं उदर, यकृत, प्लीहा, किडनी, मूत्राशय, मलाशय तथा अन्यान्य अन्तःस्रावी ग्रन्थियों (Endocrine glands) को भी प्रभावित, सतेज, कर्मक्षम करता है। पहले बताया गया है कि श्वास द्वारा ऑक्सीजन फुफ्फुस में जाने के पश्चात् फुफ्फुस अपनी रासायनिक प्रक्रिया से ऑक्सीजन को कार्य में लेकर कार्बन डाइऑक्साइड अर्थात् "दूषित वायु" को प्रश्वास द्वारा निकाल देता है। स्वाथ्य-रक्षा के लिए आवश्यक है कि रक्तवहा नाड़ियों में प्रवाहित रक्त में ऑक्सीजन प्रचुर मात्रा में मिलती रहे। प्राणायाम का विशेषत्व यह है कि फुफ्फुस को प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन मिलती रहती है।

साधारणतया मनुष्य जिस प्रकार श्वास लेता है उससे फुफ्फुस पूर्णतया नहीं भर पाता, कुछ अंश रिक्त पड़ा रहता है। उक्त खाली अंश में वायु का संचार भली भाँति नहीं होने के कारण वहाँ छिद्र-समूह धीरे-धीरे निष्क्रिय हो जाता है जिससे कीटाणुओं का आश्रय-स्थल बन जाता है। विशेषतः राजयक्ष्मा (टी.बी.) का। किन्तु प्राणायाम के गहरे श्वास से दोनों फुफ्फुस वायु से पूर्णतया फूल जाते हैं। करोड़ों छिद्र कर्मक्षम बने रहते हैं। साधारण स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में प्रति मिनट १८ वार श्वास क्रिया चलती है और प्रत्येक प्राणायाम यदि आधे मिनट के हिसाब से रोज १० वार भी लोग करें तो प्रतिदिन ९० श्वास-प्रश्वास कम हो जाते हैं। जितने श्वास-प्रश्वास कम किये जाते हैं उतने ही अनुपात में आयु की वृद्धि होती है।

फुफ्फुस की अवस्थिति में देखा गया है कि हृदय के दोनों पार्श्वों में दोनों फुफ्फुस स्थित हैं। अतः इस संदर्भ में श्वास-प्रश्वास प्रणाली के द्वारा फुफ्फुस के माध्यम से हृदय पर जो

प्रभाव पड़ता है उसकी संक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

हृदय

हृदय एक अद्भुत अंग है। यह अनैच्छिक मांस से निर्मित है और दोनों फुफ्फुसों के मध्य में वक्षःस्थल के अन्दर रहता है एवं शरीर में रक्त का संचालन करता रहता है। इस रक्त को सभी अंग-प्रत्यंगों में पहुँचाकर उनका पालन करता है। हृदय कभी विश्राम नहीं लेता, निरंतर अपना कार्य करता रहता है। जीवन भर संकोचन और विकोचन में प्रवृत्त रहता है। एक वार फैलता है और फिर सिकुड़ता है। स्वस्थ मनुष्य के हृदय के स्पन्दन की संख्या ४,५ : १ अर्थात् जिस समय मनुष्य एक श्वास लेता है उसी समय में हृदय का चार या पाँच वार स्पन्दन होता है। इसी प्रकार प्रति मिनट में ७२ वार फैलता व सिकुड़ता हुआ अन्त तक गतिशील रहता है। जव हृदय में संकोचन होता है उस समय हृदय से रक्त सब अंगों की ओर जाता है तथा संकुचन के पश्चात् जब हृदय विस्तृत होता है तब पुनः रक्त हृदय में आ जाता है। जो रक्त-कण जहाँ से चलता है, स्वल्प समय के पश्चात् फिर उसी स्थान पर आ जाता है। यह संकोचन-विकोचन का कार्य हृदय की पेशी का गुण है। पेशियाँ नाड़ियों से सम्बन्ध रखती हैं। हृदय के संकोचन से रक्त में गति अवश्य आ जाती है, किन्तु वह गति इतनी अधिक नहीं होती कि रक्त को अंतिम निर्दिष्ट स्थान तक पहुँचा सके। धमनियों की भित्तियों की मांसपेशियाँ इस कार्य को पूर्ण करती हैं। रक्त में प्रत्येक समय गति हुआ करती है, वह कभी स्थिर नहीं रहता। हृदय का कार्य केवल शुद्ध रक्त को शरीर में भ्रमण कराना है।

सृष्टिकर्त्ता ने फुफ्फुस को केवल इसलिये बनाया है कि वहाँ रक्त के कण ऑक्सीजन प्राप्त कर सकें और हृदय व तत्संबंधी

नलिकाओं का यह कार्य है कि वह ऑक्सीजनयुक्त रक्त को अन्य पोषक पदार्थों के साथ भिन्न-भिन्न स्थानों पर पहुँचा सके। इनमें सम्मिलित हिमोग्लोबिन का यह अद्भुत गुण है कि वह तुरन्त ऑक्सीजन को जहाँ पाती है सहज में ही सोख लेती है।

शरीर के ये दोनों यन्त्र, फुफ्फुस और हृदय, जीवनधारा के अस्तित्व को स्थायी रखने के लिए कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, पाठकों को संक्षेप में ज्ञात हो गया होगा। इससे यह प्रतीयमान हुआ है कि ऑक्सीजन शरीर का प्रधान खाद्य तथा अवलम्बन है। पहले बताया गया है कि स्वाभाविक रूप में श्वास से फुफ्फुस पूर्णतया नहीं खुल पाते। अनेक स्थान खाली रह जाते हैं अर्थात् ऑक्सीजन की माँग पूर्ण नहीं हो पाती। यह पूर्णता प्राणायाम में प्राप्त हो जाती है। रोगी-परीक्षणकाल में डॉक्टर लोग इसीलिए रोगियों को ज़ोर-ज़ोर से श्वास लेने के लिए कहते हैं एवं साथ-साथ परीक्षण भी चालू रखते हैं। इससे फुफ्फुस, हृदय व अन्यान्य तन्तुओं की सही स्थिति ज्ञात हो जाती है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के विशेषज्ञ चिकित्सकगण भी ब्रीदिंग एक्सरसाइज़ तथा प्राणायाम का महत्त्व स्वीकार करते हैं। इस सन्दर्भ में यहाँ डॉ० यतीन्द्रनाथ घोषाल द्वारा लिखित "टेक्स्ट-बुक ऑफ एनाटामी एण्ड फिजियोलॉजी" बंगला पुस्तक की श्वास-प्रश्वास क्रिया अध्याय का हिन्दी अनुवाद नीचे उद्धृत किया जा रहा है :—

"प्राणायाम, ब्रीदिंग एक्सरसाइज़ : पूरक और रेचक क्रिया यदि रोज़ नियमित रूप से प्रातः एवं सायं निर्दिष्ट समयानुसार पाँच मिनट तक की जाए तो मस्तिष्कजीवियों की बहुत-सी रिजर्व एयर ताज़ा रखना संभव होगा। हम लोगों के फुफ्फुस आधे से अधिक, हवा तथा ऑक्सीजन से वंचित रहते हैं। यदि

पूर्ण पूरक और सम्पूर्ण रेचक द्वारा प्रतिदिन दो बार इस वायु को ताज़ा रखा जा सके तो वृद्धावस्था में भी शरीर को कार्यक्षम व स्वस्थ रखा जा सकता है। धीरे-धीरे चोंच-मुख करके श्वास लेवें और धीरे-धीरे फेफड़े खाली करते हुए प्रश्वास छोड़ें एवं अंत में पेट अन्दर की ओर मेरुदण्ड तक प्रविष्ट कराकर डायफ्राम को वक्ष:स्थल की ओर ले जाकर दोनों फुफ्फुसों से समस्त वायु बाहर निकाल दें और पुन: धीरे-धीरे श्वास ग्रहण करें।"

उपर्युक्त उद्धरण में प्राणायाम तथा तत्संबंधित क्रियाओं का नाम उद्धृत नहीं किया गया है। किन्तु प्रच्छन्न रूप में शीतली व शीतकारी प्राणायाम की श्वास ग्रहण प्रक्रिया एवं उड्डियान बन्ध लगाने के बारे में लिखा है जो कि पाठक तथा साधकगण इस पुस्तक के प्राणायाम प्रकरण में प्रत्यक्ष रूप से अवगत हो सकेंगे। पाठक तथा साधक गहरे अध्ययन द्वारा अथवा उपयुक्त अधिकारी के प्रत्यक्ष तत्त्वावधान में रहकर प्राणायाम अभ्यास तथा साधन करें। त्रुटिपूर्ण अभ्यास या प्रयोग में शारीरिक व मानसिक क्षति पहुँचने की संभावना बनी रहती है। साथ-साथ नियमादि भी अवश्य पालन करें, नहीं तो विपरीत प्रतिक्रिया होना अवश्यम्भावी है। लेखक ने वर्षों तक स्वयं पर प्रयोगात्मक रूप में शास्त्र-वर्णित नियम-अनियम की क्रिया-प्रतिक्रिया को परिलक्षित किया है।

आहार

"अन्नाद्भवन्ति भूतानि" गीता के इस महावाक्य के आधार पर प्राणिमात्र की ही उत्पत्ति अन्न से होती है और अन्न द्वारा ही जीवन-रक्षा होती है। आचार-विचार, चिन्तन-मनन सब कुछ अन्न के गुणों पर निर्भर है। जैसा अन्न वैसी ही जीवनधारा गठित होती है। इसलिए हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने सुखी, सुन्दर, सुव्यवस्थित जीवनयापन के लिए सात्विक आहार पर अत्यधिक महत्त्व दिया है। सत्व, रज, तम तीनों गुणों की ही भाँति भोजन को भी सात्विक, राजसिक तथा तामसिक तीन विभागों में विभक्त किया गया है जिसके प्रकार एवं गुणों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

सात्विक भोजन एवं उसके गुण

सात्विक भोज्य पदार्थ रसदार, स्निग्ध एवं आनन्दप्रद होता है। जो अत्यधिक मिर्च, खटाई और नमकरहित हो तथा जो न अति उष्ण न अति शीतल, न अति तीक्ष्ण हो एवं जो नीरस व शुष्क भी न हो, ताजा बना हो, बहुत देर तक खुला पड़ा हुआ, सड़ा तथा दुर्गन्धयुक्त न हो, उच्छिष्ट तथा अपवित्र न हो, स्वच्छ, निर्मल, पवित्र हो, जिसके अवलोकन से ही मन में प्रसन्नता तथा अनाविल आनन्द का उन्मेष हो जाय, ऐसा अन्न सात्विक अन्न कहलाता है। सात्विक मनुष्य को यह स्वभाव से ही प्रिय होता है। इसके सेवन से हृदय में आनन्द, शरीर तथा वीर्य में स्थिरता आती है। मनुष्य नीरोग रहकर दीर्घ जीवन लाभ करता है। दीर्घायुष्य मनुष्य को सप्तधातु की संशुद्धि,

बल, आरोग्य, सुख और प्रसाद की प्राप्ति होती है। शारीरिक स्वास्थ्य, इंद्रियों का संयम और मन की प्रसन्नता इससे ही सिद्ध होती है।

राजस भोजन एवं उसके अवगुण

राजस अन्न में अत्यन्त मिर्च, खटाई, लवण आदि मसाले सभी तीक्ष्ण होते हैं। अति उष्ण, अति शीतल, अति रुक्ष अर्थात् खुश्की उत्पन्न करनेवाला अन्न राजस होता है। ऐसे अन्न को मुख में रखते ही जलन होने लगती है, नासिका व नेत्रों से जल निकलने लगता है। साथ-साथ पेट में पहुँचते ही वहाँ भी अन्दर जलन अनुभव होने लगती है। अथच इस जलन से ही राजसिक लोग प्रसन्न रहते हैं वरन् जलन नहीं करनेवाला पदार्थ उन लोगों की दृष्टि में अनुपयुक्त खाद्य माना जाता है।

राजस अन्न से शारीरिक समता नहीं रहती है। शरीर के सप्त धातुओं में विषमता बढ़ जाती है जिससे रोग और अशांति घेर लेते हैं। ऐसी विपत्तियाँ झेलते हुए भी राजसिक लोग प्रेम से राजसिक अन्न ग्रहण करते हैं।

राजसी भोजन से वीर्य क्षय होता है। नानाविध रोग से मनुष्य पीड़ित रहता है। इससे शारीरिक, मानसिक अशान्ति और क्लेश अनवरत सताते रहते हैं। आयु क्षीण हो जाती है। धन संपदा में संपत्तिशाली होते हुए भी अशान्तिमय जीवन बिताना पड़ता है। अतः राजस स्वभाव होने के कारण एवं राजस अन्न के प्रति आकर्षण होते हुए भी मनुष्य को राजस अन्न से पृथक् रहना चाहिए अर्थात् अति नमकीन, मिर्च, खटाई, अति उष्ण, अति शीतल, अति तीक्ष्ण तथा रुक्ष खाद्य पदार्थों की मात्रा त्याग करके अपने भोजन में स्निग्धता, मधुरता, रसमयता तथा पवित्रता का प्रभाव बढ़ाकर सात्विक अन्न सेवन करने का प्रयत्न करते रहना चाहिए।

तामसिक भोजन एवं उसके अवगुण

बड़ी देर से पड़ा हुआ, सड़ा हुआ, कृमि की ढोंस लगा हुआ, बाल तथा नाखून के स्पर्श से दूषित, दुर्गन्धयुक्त, उच्छिष्ट, अपवित्र अन्न को तामस अन्न की संज्ञा दी जाती है। यह प्रत्येक प्रकार के रोग और अस्वस्थता का कारण होता है। इसके प्रयोग से बुद्धि क्षीण तथा मलिन हो जाती है। दुःख, दैन्य, कष्ट, अशान्ति चारों ओर से घेर लेते हैं। आयु क्षीण होती रहती है। मनुष्य उत्साहहीन हो जाता है तथा सुस्त, मलिन और प्रमादी बनकर निकृष्ट जीवन यापन करता है। अतः तामसिक लोग भी इन भयानक परिणामों को देखते हुए ऐसे अन्न का पूर्ण परित्याग करें, इससे दूर ही रहने की प्रचेष्टा करें। इससे किंचित् भी बचाव हो सकने पर बड़े अनर्थ से मुक्त रह सकेंगे।

तीन गुणों में गुणान्वित लोगों के लक्षण तथा तीनों गुणों से युक्त खाद्य पदार्थों का प्रकार, भेद, गुण-समूह ऊपर वर्णन किया गया है। अतः साधक अर्थात् योग-प्राणायाम अभ्यासी के लिए सात्विक आहार ही अनुकूल तथा श्रेयष्कर रहता है। यौगिक प्रक्रिया ऋषि-मुनियों द्वारा प्रतिपादित है। ये मनीषी विज्ञानविद्, दूरद्रष्टा एवं आत्मद्रष्टा थे। इनका जप, तप, साधना, सर्वस्व मानव-कल्याण के लिए था। उनका अवदान, वर्तमान भौतिक जगत्वासियों के लिए तो आशीर्वाद स्वरूप है। अतः मनुष्य प्रत्येक स्थिति में इस महान् अवदान को अपनाकर यदि शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति-लाभ में तत्पर रहें तो भौतिक जगत् के भोग भी नियमपूर्वक, संतुलित तथा व्यवस्थित रूप से भोगने में समर्थ रहेंगे।

पद्मासन
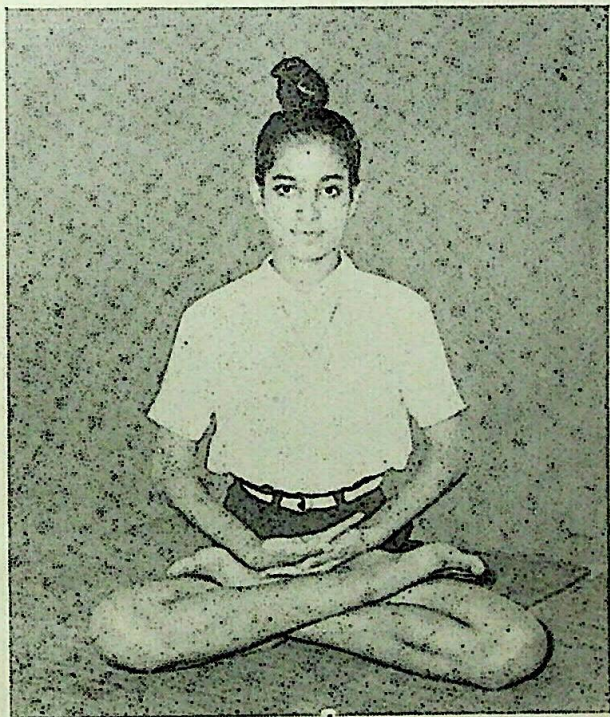
चित्र संख्या १

विधि – दोनों पैर सामने फैलाकर बैठते हुये वाम घुटना मोड़कर पैर को दाहिनी जंघा के मूल में रखें। पश्चात् दाहिना घुटना मोड़कर पैर को वाम जंघा के मूल में इस प्रकार रखें कि दोनों एड़ियाँ आपस में नाभि के सीध में मिल जावें तथा दोनों पादतल ऊपर की ओर रहें।

सिद्धासन
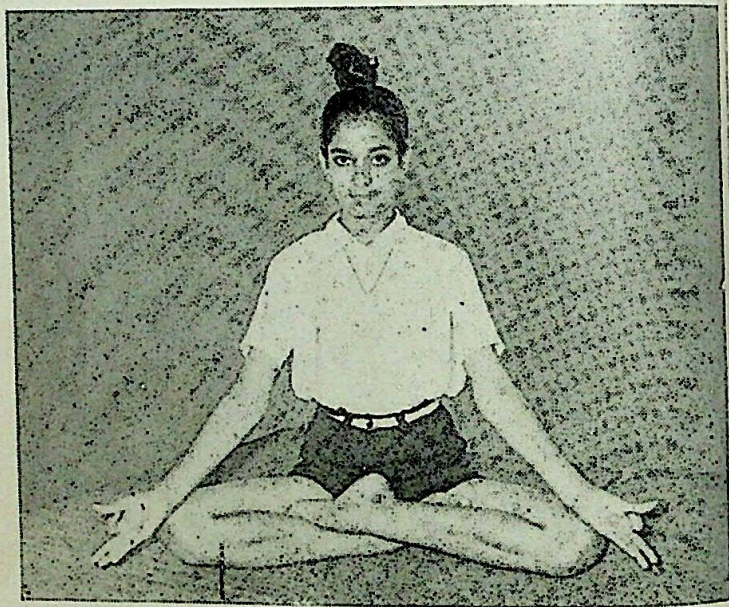
चित्र संख्या २

विधि – दोनों पैर सामने फैलाकर बैठते हुये दाहिना घुटना मोड़कर एड़ी गुदा एवं कोषों के नीचे सिवन में लगाकर इस प्रकार स्थापित करें कि अंगूठा पिण्डली और जंघा के संधिस्थल में प्रविष्ट होकर ऊपर की ओर उठा रहे। पश्चात् वाम घुटना मोड़कर एड़ी को नाभि के सीध में मूत्रेन्द्रिय के मूल में इस प्रकार रखें कि दाहिना अंगूठा पिण्डली एवं जंघा के संधिस्थल में नीचे की ओर प्रविष्ट होकर रहे।

सुखासन
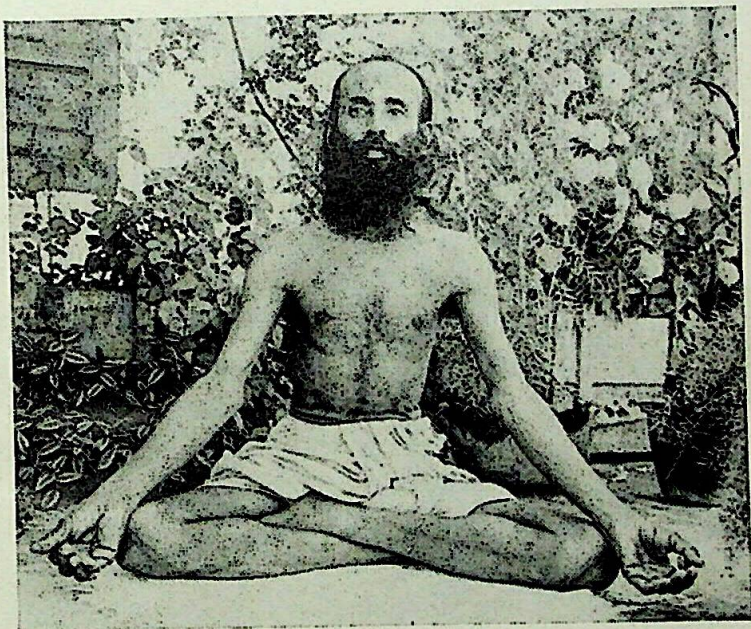
चित्र संख्या ३

अभ्यास

प्राणायाम एक ऐसी प्रणाली है जिसमें हठधर्मिता नहीं चल पाती है। सरल, सहज तथा अक्लेशजनक स्थिति में ही प्राणायाम करना विधेय है। प्राणायाम अभ्यास के लिए आसन, समय, स्थान तथा क्रम के संबंध में पूर्ण जानकारी आवश्यक है।

आसन

प्राणायाम अभ्यासकारी को पहले कुछ आसन करके नाड़ी-समूह का शोधन तथा अंग-प्रत्यंगों को कड़ापन-विहीन कर लेना चाहिए; जिससे सुखपूर्वक बिना हिले-डुले स्थिर होकर बैठा जा सके। प्राणायाम के लिए पद्मासन (चित्र सं० १) तथा सिद्धासन (चित्र सं० २) उत्तम माने जाते हैं। किन्तु वर्तमान समय में कई अनिवार्य कारणों से खाने, पीने, सोने, बैठने, पढ़ने, लिखने आदि सभी कार्यों में हमारी प्राचीन पद्धति, रीति-परम्परा का जाने अनजाने परित्याग करने की प्रवृत्ति लोकमानस में आ गई है। कुर्सी आदि उच्च स्थान पर उपविष्ट होकर पैरों को नीचे लम्ब की भाँति फैलाकर उपर्युक्त सभी नित्य नैमित्तिक कर्म-समूह निर्वाह करने के कारण घुटने मोड़ कर पद्मासन या सिद्धासन में बैठना दुरूह हो गया है। किन्तु अब भी लोग भलीभांति पलथी मारकर, जिसको सुखासन (चित्र सं० ३) भी कहा जाता है, बैठते हैं। इसलिए पद्मासन व सिद्धासन के विधि एवं चित्र तथा सुखासन का भी चित्र इस पुस्तक में दिया गया है। साधक इन तीनों आसनों में से जो उन्हें उपयुक्त तथा सुखदायक प्रतीत हो, किसी एक पर बैठकर अभ्यास करे जिससे प्राणायाम के

समय किसी प्रकार का कष्ट एवं पीड़ा का अनुभव न हो। क्योंकि अभ्यास बढ़ाते-बढ़ाते अधिक संख्या में प्राणायाम करते समय एक ही आसन पर बैठना पड़ता है, शरीर के किसी भाग में किंचित् पीड़ा से प्राणायाम का क्रम तथा मानसिक स्थिरता छिन्न-भिन्न हो जाती है। इसलिए साधक के लिए प्राणायाम आरम्भ करने से पूर्व उपर्युक्त आसन में से किसी भी एक आसन का भली प्रकार अभ्यास कर लेना अनिवार्य है। इस पुस्तक में प्राणायाम करने की विधि में कोई विशेष आसन का नाम नहीं देकर "यथाविधि आसन पर बैठ जायें" का उल्लेख किया गया है।

समय

प्राणायाम-अभ्यास का समय सूर्योदय से पूर्व ब्रह्ममुहूर्त्त (सूर्योदय से लगभग दो घण्टे पूर्व) एवं सूर्यास्त के ठीक पश्चात् उत्तम माना जाता है। अवश्य, उच्चतर साधना के अभ्यासी साधक मध्यरात्रि में भी कर सकते हैं। विशेष ग्रीष्मप्रधान देश में दिनमान में प्राणायाम अनुकूल नहीं रहता। शरीर में क्लान्ति तथा अवसाद आ जाता है। तदुपरान्त बाहर का वातावरण शान्त नहीं रहने के कारण एकान्तता भंग हो जाती है। साधारण स्वास्थ्य-सम्पन्न प्रथम अभ्यासकारी के लिए शरद और वसन्तऋतु उपयुक्त रहती हैं। ग्रीष्मऋतु में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जीर्ण सर्दी, जुकाम, कफ़ और दमाग्रस्त लोग शीत, ग्रीष्म, शरद, वसन्त सब ऋतुओं में प्राणायाम का अभ्यास कर सकते हैं तथा एक बार ऋतु के अनुसार अभ्यास प्रारम्भ करने के उपरान्त सभी ऋतुओं में चालू रख सकते हैं।

स्थान

प्राणायाम करने के लिए एकान्तता अति आवश्यक है। पूर्णरूपेण कोलाहलरहित स्थान होना चाहिए। यहाँ तक कि

प्राणायाम करने के समय सूक्ष्म ध्वनि भी कान में सुनाई नहीं पड़े। पवित्र, स्वच्छ, दुर्गन्धहीन, असबाव आदि रहित, ऐसा निर्दिष्ट स्थान होना विधेय है जहाँ विशुद्ध वायु का सहज आवागमन हो सके। अथच वायु की तीव्रता भी न रहे। क्योंकि वायु की तीव्रता का आघात फुफ्फुस पर पड़ता है, इससे फुफ्फुस दुर्बल हो जाते हैं। विशेष प्राणायाम की सिद्धि के लिए अभ्यासी साधक को तो वायु की तीव्रता कभी-कभी घातक भी हो जाती है। अधिक देर तक प्राणायाम करने से शरीर बहुत हल्का हो जाता है तथा प्रचण्ड वायु द्वारा जीर्ण पत्र की भाँति साधक को आसन से गिरा देने की संभावना बनी रहती है।

क्रम

प्राण और अपान वायु का संतुलन अर्थात् नियंत्रित श्वास-प्रश्वास द्वारा अन्तर्शुद्धीकरण क्रिया ही प्राणायाम मानी जाती है। प्राणायाम वैज्ञानिक तत्त्वों पर आधारित होने के कारण नियम-शृंखला तथा क्रम में आबद्ध है। प्रत्येक प्राणायाम का क्रम है – १:४:२ अर्थात् श्वास लेने का चौगुना समय श्वास अन्दर रोकना और द्विगुण समय में श्वास बाहर निकालना। जैसे पाँच सेकण्ड में श्वास भरें तो बीस सेकण्ड तक अन्दर रोकें तथा दस सेकण्ड में प्रश्वास बाहर निकालें। इस श्वास-प्रश्वास लेने, रोकने और त्यागने को क्रमशः पूरक-कुम्भक-रेचक नाम से अभिहित किया गया है जिसका विवरण निम्न प्रकार है :–

श्वास ग्रहण – पूरक

ग्रहण के बाद रोकना – कुंभक (आन्तरिक)

प्रश्वास त्यागना – रेचक

प्रश्वास के बाद श्वास बाहर रोकना – बाह्य कुंभक

पूरक, कुंभक और रेचक भी मात्रा अनुसार कनिष्ठ, मध्यम और उत्तम तीन श्रेणियों में निम्न प्रकार विभाजित हैं :–

	पूरक मात्रा सेकण्ड अथवा गिनती में	कुंभक मात्रा सेकण्ड अथवा गिनती में	रेचक मात्रा सेकण्ड अथवा गिनती में
कनिष्ठ	४	१६	८
मध्यम	८	३२	१६
उत्तम	१६	६४	३२

साधक अपनी शक्ति के अनुसार क्रम निर्धारित करके प्राणायाम का आभ्यास प्रारम्भ करें एवं शनैः शनैः क्रमसंख्या बढ़ाते रहें। इससे प्राणायाम की संख्या बढ़ाने की शक्ति बढ़ जावेगी। अर्थात् उत्तम श्रेणी में पहुँच पावेंगे, जैसा कि उपर्युक्त विवरण में दिया गया है। साधक ध्यान रखें कि पूरक और कुंभक के समय या दोनों की पूर्ण स्थिति में पेट फूल कर बाहर की ओर न बढ़े, पेट स्वाभाविक स्थिति में ही रहे।

बन्ध

प्राणायाम के साथ मूलबन्ध, जालन्धरबन्ध और उड्डियान-बन्ध, तीनों बन्ध भी संश्लिष्ट हैं। बिना बन्धों के प्राणायाम पूर्ण नहीं होता। प्रत्येक प्रकार के प्राणायाम के साथ मूलबन्ध और जालन्धरबन्ध लगा ही रहता है। प्राणायाम-विशेष के साथ उड्डियान सहित तीनों बन्ध एक साथ रहते हैं। यहाँ तीनों बन्धों का विवरण एवं उपयोगिता दी जा रही है। साधक गहरे अध्ययन के पश्चात् प्रयोग में लावें।

मूलबन्ध

यथाविधि आसन पर बैठकर मलद्वार (गुदा) और मूत्रेन्द्रिय (लिंग या योनि) को आन्तरिक बल-वेगपूर्वक संकुचन द्वारा अपानवायु के साथ ऊपर की ओर धीरे-धीरे खींचें। इससे उपर्युक्त दोनों द्वार बन्द हो जावेंगे। किन्तु ध्यान रहे कि खिंचाव का दबाव अंग के किसी अन्य भाग पर न पड़े। प्रायः देखा जाता है कि आन्तरिक बल प्रदान की अपेक्षा बाहर का बल ही प्रदत्त होता है जिससे उपर्युक्त दोनों बन्धों के ऊपर प्रभाव न पड़ कर सारे शरीर के ऊपर ही पड़ता है। शरीर ऊपर की ओर खिचा रहता है। मूलबन्ध का प्रयोग ऐसा होना चाहिए कि अन्य किसी को ज्ञात न हो। प्राणायाम के अतिरिक्त साधारण अवस्था में बैठ कर मूलबन्ध लगाते हुए बात भी कर सकते हैं। खड़े होकर भी मूलबन्ध लगाया जा सकता है। परन्तु इसके लिए प्रचुर मात्रा में अभ्यास की आवश्यकता है।

मूलबन्ध लगाने के कारण दोनों द्वार बन्द हो जाते हैं। इससे दोनों द्वारों के उद्गम स्थान का व्यायाम हो जाता है तथा मूलबन्ध खुलते ही तीव्र गति से शुद्ध रक्त उपर्युक्त स्थान-समूह एवं नाड़ियों में प्रवेश करता है जिससे बवासीर, खूनी बवासीर, गुल्म (मस्सा) आदि मलद्वार संबंधी रोग नहीं होते। हो भी जायें तो ठीक हो जाते हैं। साधारणतः मूत्रेन्द्रिय का दवाव निम्नाभिमुखी होता है। किन्तु मूलबन्ध लगाने से इन्द्रिय-मूल का खिचाव ऊपर की ओर रहता है। इससे वीर्यवहा नाड़ी की गति ऊद्ध्वंमुखी हो जाती है। कामशक्ति सीमित होती है। ब्रह्मचर्य पुष्ट होता है। स्वप्नदोष, प्रमेह, गनोरिया आदि गुप्त रोग निर्मूल होते हैं। क्लोम ग्रन्थि के ऊपर मूलबन्ध का दवाव भली भाँति पड़ता है जो कि मधुमेह रोग-निवारण में अतीव सहायक है। साथ ही स्त्रियों के अनियमित मासिक धर्म, अत्यधिक स्राव, प्रदर एवं जरायु संक्रान्त रोग दूर होते हैं। नियमपूर्वक अभ्यासियों (नारी वा पुरुष) को उपर्युक्त किसी प्रकार की पीड़ा नहीं होती। मूलबन्ध से प्राणवायु सुषुम्नावाही होती है।

प्राणायाम करते समय प्रारम्भ से अन्त तक मूलबन्ध लगा ही रहना चाहिये।

जालन्धरबन्ध

पूरक करके आँखें बन्द करते हुए ठुड्डी को कंठकूप में लगाकर श्वास रोकने की प्रक्रिया को जालन्धरबन्ध कहते हैं। इस प्रक्रिया से विशुद्ध चक्र तथा श्वासवहा नलिका का द्वार बन्द हो जाता है। इससे मस्तिष्क में वायु का आघात पहुंचना रुक जाता है। ज्ञानतन्तुओं का केन्द्रस्थल मस्तिष्क में होने के कारण ज्ञानतन्तु शक्तिसम्पन्न होते हैं। साथ-साथ कंठकूप से

लेकर समग्र ग्रीवा प्रदेश पर उपयुक्त खिंचाव तथा प्रभाव पड़ता है। इससे उपर्युक्त स्थान-समूह की नस-नाड़ियों का पर्याप्त व्यायाम हो जाता है तथा थाइरोइड, पैरा थाइरोइड ग्रंथियाँ प्रभावित होती हैं; जिससे टांसिल, गलगंड, हंजिरा, कंठमाला, अस्पष्ट स्वर तथा गला पड़ना आदि दोष दूर होकर कंठ का स्वर सुरीला, मधुर और आकर्षक बन जाता है। जालन्धरबन्ध के साथ-साथ इड़ा-पिंगला नाड़ियाँ भी बन्द हो जाने के कारण प्राण सुषुम्नावाही होने में सहायता मिलती है।

रेचक करते समय ग्रीवा को धीरे-धीरे समावस्था में लाकर आँखें खोलकर जालन्धरबन्ध खोला जाता है।

विशेष सूचना

जालन्धरबन्ध लगाते समय साधक ध्यान रखें कि ग्रीवा सीधी रखते हुए केवल ठुड्डी ही कंठकूप से मिली रहे। असावधानी के कारण ग्रीवा झुकने से क्षति पहुंचने की संभावना है। ग्रीवा तथा इसकी नसनाड़ियों में सूजन एवं साथ-साथ मेरुदण्ड के मध्यवर्ती स्थान में वक्रता आ जाती है।

उड्डियानबन्ध

निर्दिष्ट समय तक कुंभक करने के पश्चात् रेचक करते-करते पेट को अन्दर की ओर खींचते हुए पूर्णतया मेरुदण्ड के साथ मिलाकर रखने को उड्डियानबन्ध कहा जाता है। पेट को अन्दर की ओर खड्डे की भांति बनाकर जितना अधिक खींचा जाता है उतना ही अच्छा रहता है। इस स्थिति में बाह्य कुंभक रखें। अर्थात् रेचक के पश्चात् श्वांस बाहर ही रोके रहें। इससे उड्डियानबन्ध अधिक समय तक रखने में अतीव सहायता मिलती है।

उड्डियानबन्ध में दोनों फुफ्फुसों का भी संकोचन हो जाता है। इससे फुफ्फुसों में प्रवाहित असंख्य नाड़ियाँ उत्तेजित होती हैं जिससे फुफ्फुस-कोष-समूह को शक्ति मिलती है। फुफ्फुस संक्रान्त रोग विशेषकर यक्ष्मा (टी. बी.) आक्रमण के प्रतिरोध करने में समर्थ रहकर शरीररूपी यन्त्र को सक्षम रखने में हृदय की सहायता करते रहते हैं।

पेट पूर्णतया अन्दर की ओर खिंचे रहने के कारण संपूर्ण उदर-गह्वर का व्यायाम हो जाता है जिससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है, कब्ज दूर होता है, उदर-वायुविकार (Gastric trouble) ठीक हो जाता है। आंतशूल, पेचिश, पेट की वादी आदि की निवृत्ति होती है तथा उदर संबंधी समस्त रोगों से मुक्त रहा जा सकता है। क्लोम ग्रन्थि के ऊपर भी उड्डियानबन्ध का दबाव पड़ता है जिससे मधुमेह (Diabetes) रोग के निवारण में सहायता मिलती है। तदतिरिक्त यकृत, प्लीहा, किडनी, मूत्राशय, मलाशय, क्षुद्रान्त्र, बृहदान्त्र, और अन्यान्य अन्त:स्रावी ग्रन्थियों (Endocrine glands) को प्रभावित करके सतेज व कर्मक्षम करता है। उड्डियानबन्ध में वीर्यवहा नाड़ी पर भी प्रभाव पड़ता है। इससे उपर्युक्त नाड़ी की गति उद्ध्र्वमुखी होने लगती है। स्वप्नदोष, प्रमेह आदि गुप्त रोगों के निवारण में सहायता मिलती है।

प्राणवायु का प्रभाव भी ऊपर की ओर होने में सहायता मिलती है। तीनों बन्ध एक साथ लगाकर रहें तो शरीर की सहस्रों नाड़ियों का एक साथ परिमित व्यायाम हो जाता है। इससे तीनों बन्धों के स्थान-समूह एवं नाड़ियों के सभी दोष प्रशमित हो जाते हैं। नित्य अभ्यासी को किसी प्रकार का रोग होने की संभावना नहीं रहती। किन्तु तीनों बन्धों का अभ्यास

सुदृढ़ रूप में भली भाँति होना विधेय है। कोई भी बन्ध अप्रत्याशित रूप से अर्थात् झटके के साथ खोलना वर्जित है एवं बन्ध के समय शरीर में किसी प्रकार की हलचल या तनाव की स्थिति नहीं होनी चाहिए। शान्त समाहित चित्त होकर शरीर को सरल, स्वाभाविक स्थिति में रखकर तीनों बन्धों का प्रयोग करें।
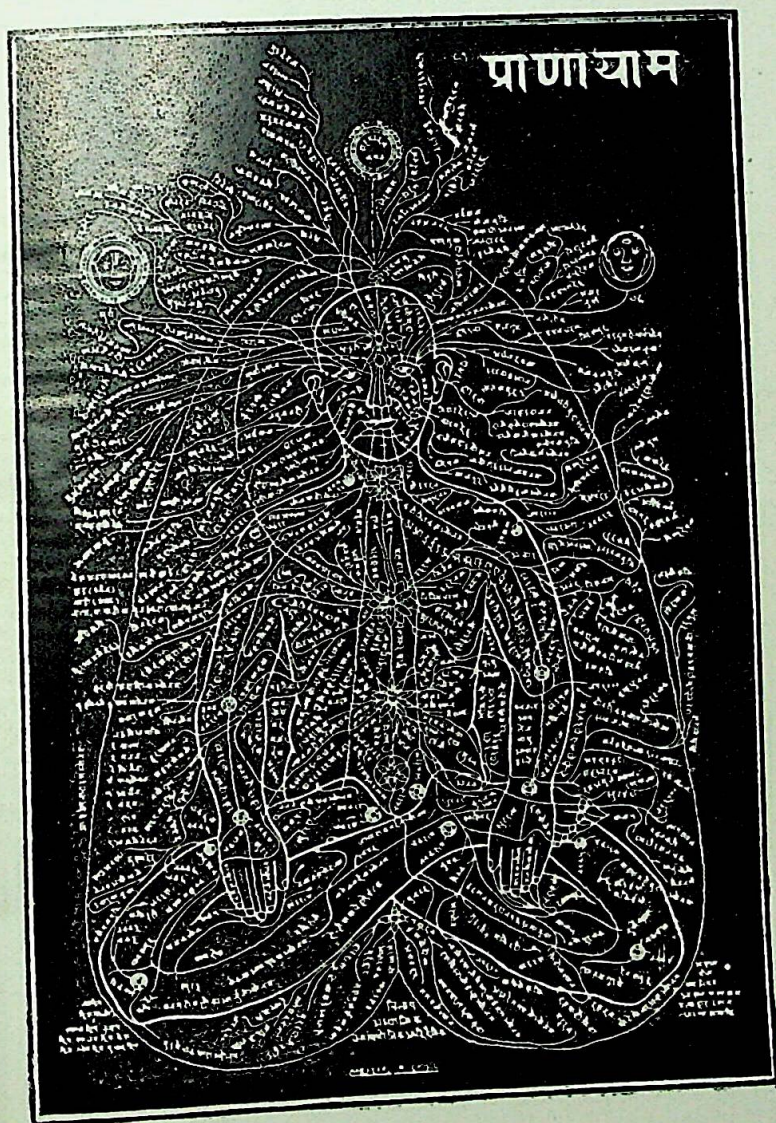
प्राणायाम

शवासन
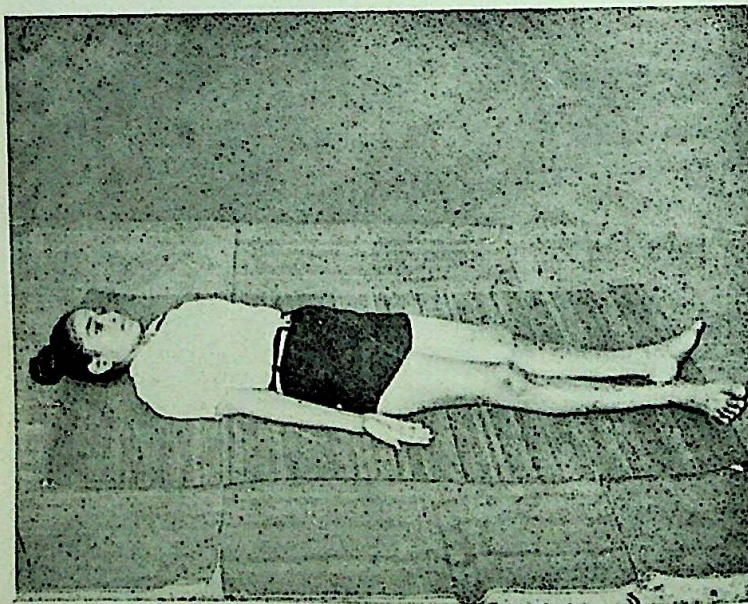
चित्र संख्या ४

प्राणायाम प्रकरण

साधक शौच, स्नान आदि नित्यकर्म से निवृत्त होकर शुद्ध वस्त्र एवं लंगोट पहन कर पूर्व वर्णित उपयुक्त निर्दिष्ट स्थान पर मृगचर्म अथवा अन्य किसी पवित्र आसन पर यथाविधि आसन लगा कर मन को अन्तराभिमुखी करते हुए बैठ जायँ। मेरुदण्ड सीधा रहे किन्तु शरीर तना हुआ न हो। क्योंकि शरीर तना हुआ होगा तो फुफ्फुस भी तन जायेंगे। इससे फुफ्फुस में वायु कम प्रवेश कर पायेगी एवं कुंभक भी अधिक देर तक नहीं रह सकेगा। प्राणायाम करते-करते प्रस्वेद निकले तो हाथ या शुष्क तौलिये द्वारा धीरे-धीरे पोंछ लें। प्रस्वेद मिटाने के लिए सिक्त तौलिये का प्रयोग अथवा ठंडे जल में स्नान न करें। प्राणायाम समाप्त हो जाने के पश्चात् तुरन्त चलना-फिरना न किया जाय तथा शरीर में ठंडी हवा न लगावें। प्राणायाम के बाद दोनों पैरों को आसन से मुक्त करते हुए सामने फैलाकर शवासन में कम-से-कम प्राणायाम के आधे समय तक लेटे रहना चाहिये (चित्र संख्या ४)। बराबर समय तक शवासन करें तो अच्छा रहता है। निर्दिष्ट समय तक शवासन में रहने के बाद भी शरीर में प्रस्वेद या प्रस्वेदजनित दुर्गन्ध दूर नहीं हो तो बन्द स्थान पर गुनगुने जल से स्नान करें एवं कपड़े आदि से शरीर अच्छी प्रकार आवृत कर बाहर निकलें। तत्पश्चात् सात्विक आहार करें। रात्रि में प्राणायाम के उपरान्त भोजन न करके गुनगुना दुग्ध-पान ही उपयोगी रहता है। प्राणायाम करने के तुरन्त बाद किसी प्रकार का गरिष्ठ आहार, शीतल जल या फल आदि ग्रहण न करें। प्राणायाम करने के लिए पेट खाली होना आवश्यक है। भोजन के कम-से-कम ५ घण्टे के उपरान्त प्राणायाम करना विधेय है।

अनुलोम-विलोम

विधि – यथाविधि आसन पर बैठ जायें, (चित्र संख्या ५) के अनुसार अंगुलियों की मुद्रा बनाकर अंगूठे से दाहिना नासारन्ध्र बन्द करें एवं साथ-साथ मूलबन्ध भी लगा लें। तत्पश्चात् वाम नासारन्ध्र से किंचित् रेचन करके धीरे-धीरे अपने निश्चित क्रम के अनुसार पूरक करें एवं (चित्र संख्या ६) के अनुसार वाम नासारन्ध्र को बन्द करके जालन्धरबन्ध लगा लें। निर्दिष्ट समय के अनुसार कुंभक करने के पश्चात् धीरे-धीरे जालन्धर-बन्ध खोलकर (अर्थात् ग्रीवा को समावस्था में लाकर) शनैः शनैः क्रमानुसार दाहिने नासारन्ध्र से रेचक करते रहें एवं साथ-साथ उड्डियानबन्ध भी लगाते रहें। रेचक और उड्डियानबन्ध एक साथ पूर्ण होने चाहिए – (चित्र संख्या ७)। तत्पश्चात् अपनी शक्ति के अनुसार बाह्य कुंभक करके फिर दाहिने नासारन्ध्र से उपर्युक्त नियम द्वारा पूरक, जालन्धरबन्ध, कुंभक एवं वाम नासारन्ध्र से रेचक करते हुए उड्डियानवन्ध और बाह्य कुंभक लगा लें। इसी प्रकार दोनों नासारन्ध्रों से पुनरावृत्ति करते रहें। प्रारम्भ में एक साथ ५ प्राणायाम ही करें। प्रति सप्ताह ५-५ प्राणा-याम बढ़ाते-बढ़ाते एक महीने में प्रति बार एक साथ २०-२५ तक किए जा सकते हैं।

लाभ – नाम से ही ज्ञात होता है कि यह प्राणायाम परस्पर विपरीतार्थक है। अनुलोम "हाँ" और विलोम "ना" अर्थ को व्यक्त करता है। जैसे घनात्मक (Positive) व ऋणात्मक

रेचक पूरक में नासारन्ध्र बन्द करने की मुद्रा तथा प्रस्तुति

चित्र संख्या ५

विधि – पद्मासन लगाकर बैठ जायें। बायें हाथ की हथेली को ऊपर की ओर रखते हुए नाभि की सीध में रखें। अब दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियाँ परस्पर मिला कर तर्जनी और कनिष्ठिका को करपृष्ठ की तरफ पीछे की ओर ले जायें।

रेचक पूरक करते हुये

चित्र संख्या ६

विधि – परस्पर मिलित मध्यमा-अनामिका अंगुलियों द्वारा वाम नासारन्ध्र बंद करते हुये दाहिने नासारन्ध्र द्वारा श्वसनक्रिया करें।

मूल, जालन्धर और उड्डियान तीनों बन्धों की संयुक्त मुद्रा
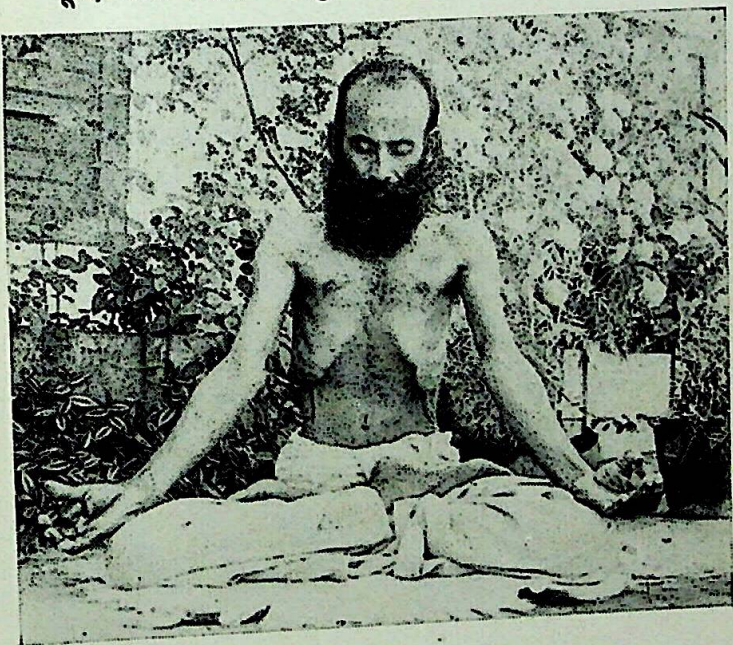
चित्र संख्या ७

(Negative) शक्ति (Current) के सम्मिश्रण तथा घर्षण द्वारा विद्युत् ज्योति की उत्पत्ति होती है उसी प्रकार मनुष्य के देहरूप विशाल यन्त्र में प्रवाहित असंतुलित प्राण-प्रवाह को यह अनुलोम-विलोम प्राणायाम संतुलित करके अपरिमित शक्ति का सृजन करता है जिससे मनुष्य दीर्घ आयु लाभ द्वारा संतुलित, व्यवस्थित जीवन बिताने में समर्थ होता है। बार-बार दोनों नासारन्ध्रों के श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया से दोनों फुप्फुसों एवं पार्श्वों की नाड़ियों का समानरूप से शोधन हो जाता है। इससे फुप्फुस में रोगाक्रमण प्रतिरोध-शक्ति की वृद्धि होती है।

जालन्धरबन्ध, उड्डियानवन्ध और मूलबन्ध लगाने के कारण ग्रीवा, उदर और वस्ति प्रदेश के दोष तथा रोग-समूह निर्मूल होने में सहायता मिलती है। यह विषय उपर्युक्त तीनों बन्धों के प्रसंगों में वर्णित है।

सूर्यभेदी

विधि –

यथाविधि आसन पर बैठ जायें। बायाँ नासारन्ध्र बन्द करके दाहिने नासारन्ध्र से किंचित् रेचक करें एवं धीरे-धीरे उक्त नासारन्ध्र द्वारा अपने निश्चित क्रम के अनुसार पूरक करें एवं जालन्धरबन्ध लगा लें। निर्दिष्ट समयानुसार कुंभक करने के बाद जालन्धरबन्ध खोलकर वाम नासारन्ध्र से रेचक करें। पुनः पूर्वोक्त रूप से दाहिने नासारन्ध्र से पूरक, कुंभक और वाम नासारन्ध्र से रेचक करें। प्रारम्भ में १० प्राणायाम करें। क्रम से बढ़ाते-बढ़ाते १२५ तक कर सकते हैं।

अनुलोम-विलोम से दोनों नासारन्ध्रों से पूरक और रेचक होता है किन्तु सूर्यभेदी प्राणायाम में केवल दक्षिण अर्थात् दाहिने नासारन्ध्र से पूरक होता है।

लाभ – इस प्राणायाम से शरीर में उष्णता बढ़ती है। जीर्ण-सर्दी, जुकाम एवं तत्संबंधित पीड़ा की प्रतिक्रियास्वरूप आक्रान्त श्वास अर्थात् दमा रोग के लिए यह अति उत्तम साधन है। नियमित अभ्यास से उपर्युक्त रोग-समूह पूर्णरूपेण निर्मूलन में अशेष लाभ होता है। इसके अतिरिक्त वातरोग, खाँसी, रक्तदोष, सिरदर्द मिटाने में सहायता मिलती है, कृमि और कुष्ठ आदि रोगों के कीटाण भी नष्ट हो जाते हैं।

विशेष सूचना –

१. यह प्राणायाम शीतऋतु में करना हितकर है क्योंकि पहले ही बताया गया है कि इससे शरीर में उष्णता बढ़ती है। सर्दी, जुकाम से पीड़ित रोगी सब मौसम में भी कर सकते हैं।

२. पित्तप्रधान प्रकृति के लोगों को यह प्राणायाम नहीं करना चाहिए क्योंकि इस प्राणायाम का सम्बन्ध दक्षिण अर्थात् दाहिने फुफ्फुस से संबंधित होने के कारण यकृत के ऊपर प्रभाव पड़ता है जिससे पित्त-वृद्धि होती है।

उज्जायी

विधि –

१. यथाविधि ग्रासन पर बैठ जायें। मुख को किंचित् निम्नाभिमुखी करके दोनों नासारन्ध्रों से एक साथ पूरक करते-करते कण्ठ से उदर तक के भाग को वायु से पूर्ण कर दें। जालन्धरबन्ध लगाकर नियमपूर्वक कुंभक करने के पश्चात् इड़ा ग्रर्थात् वाम रन्ध्र से रेचक करें। इसी तरह पुनरावृत्ति करते रहें। प्रारंभ में १० प्राणायाम करें। ग्रभ्यास के बाद १०।१० बढ़ाते हुए २५० तक कर सकते हैं।

२. खड़े होकर धीरे-धीरे चलते हुए भ्रमण के समय भी यह प्राणायाम किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में पूरक, कुंभक ग्रौर रेचक स्वल्प परिमाण में किया जाता है एवं जालन्धर, मूलबन्धादि लगाने की ग्रावश्यकता नहीं रहती है।

३. यह प्राणायाम सोकर भी किया जा सकता है। जब शारीरिक ग्रस्वस्थता के कारण ग्रन्य कोई प्राणायाम करना ग्रनुकूल नहीं रहता तब शय्याशायी होकर भी उज्जायी प्राणायाम कर सकते हैं। इस स्थिति में भी मूलबन्ध, जालन्धरबन्ध ग्रादि लगाना नहीं पड़ता है। सीधे सोकर धीरे-धीरे स्वल्प परिमाण में पूरक, कुंभक, रेचक करते रहें। प्रतिदिन कम संख्या में २।३ प्राणायाम ही करें। जैसे-जैसे शरीर में शक्ति-संचार होता रहेगा वैसे-वैसे संख्या बढ़ाते रहें तो रोगमुक्त होकर बैठकर करने की शक्ति प्राप्त हो सकेगी।

लाभ – दमा तथा कफ-प्रकोप विशेषत: जिस कफ रोगी का कफ पतला ही रहता है, गाढ़ा नहीं होता है उन्हें उज्जायी प्राणायाम स्वल्प दिवसों के अभ्यास से ही मन्त्र की तरह लाभ पहुँचाता है, पतला कफ गाढ़ा बनाकर निकलवा देता है। इसके अतिरिक्त अजीर्ण तथा मन्दाग्नि मिटाकर क्षुधावृद्धि करता है। कब्ज, गुल्म तथा मस्सा, मेदवृद्धि, प्लीहा, यकृत आदि रोग-निवारण में सहायक है। क्षय-रोग निर्मूलन में भी सहायता मिलती है।

शीतकारी

विधि – यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दोनों नासारन्ध्रों को बन्द करके मुख के अन्दर जिह्वा को ऊपर की ओर उठाते हुए अग्र भाग को गले की नाली की ओर मोड़ते हुए मध्य भाग को तालू के साथ संलग्न कर दें। तत्पश्चात् मुख को कौए की चोंच की भाँति बनाकर मुख से पूरक के पश्चात् क्रमानुसार कुंभक करके दोनों नासारन्ध्रों से शनैः शनैः नियमानुसार रेचक करें। इसी तरह प्रारंभ में १० प्राणायाम करें। क्रमशः बढ़ाते-बढ़ाते ५० तक कर सकते हैं। ग्रीष्मऋतु में एक साथ १२५ प्राणायाम तक किये जा सकते हैं।

लाभ – सूर्यभेदी प्राणायाम में शरीर में उष्णता-वृद्धि हो जाती है एवं पित्त-प्रकोप बढ़ता है तथा शीतकारी प्राणायाम में सूर्यभेदी के विपरीत शरीर में शीतलता आ जाती है और पित्त-प्रकोप प्रशमित होता है। ग्रीष्मऋतु में यह प्राणायाम बड़ा लाभदायक रहता है। जिन लोगों को गर्मी सहन नहीं होती है, प्रस्वेद निकलता रहता है, पिपासा अधिक लगती है, बार-बार बर्फ का पानी पीना पड़ता है, उन लोगों के लिए यह प्राणायाम अति लाभदायक है। ग्रीष्मऋतु में जो दूरगामी यात्री विशुद्ध पानी नहीं मिलने पर पिपासा मिटाने के लिए कैसा भी पानी पीकर रोग के कीटाणु भक्षण करता है वह दूषित पानी पीने की अपेक्षा शीतकारी प्राणायाम करता रहे तो तृषा मिट जाती है। ऐसी स्थिति में अर्थात् चलते-चलते भी तृषा मिटाने के लिए यह प्राणायाम बिना नासारन्ध्र वन्द किए किया जा सकता है।

तदतिरिक्त यह प्राणायाम मन्दज्वर, अतिप्रदाह, निद्रा, आलस्य तथा क्षुधा मिटाता है, शरीर की दुर्बलता दूर करके वलवान बनाता है। किसी-किसी की दृष्टि में विषनाशक भी है एवं बालों का पकना, झड़ना भी बन्द हो जाता है।

विशेष सूचना

शीतऋतु में यह प्राणायाम अनुकूल नहीं रहता है। सर्दी, जुकाम तथा श्वासग्रस्त लोगों के लिए यह प्राणायाम वर्जित है।

शीतली

विधि – यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दोनों नासारन्ध्रों को बन्द कर लें। तत्पश्चात् ओठों को कौए की चोंच की भाँति बनाकर जिह्वा को ओष्ठों से एक अंगुल परिमाण बाहर निकालकर (∧) इस प्रकार नली रूप आकृति बनाकर विधिपूर्वक मुख द्वारा पूरक करें। निर्दिष्ट समय तक कुंभक करने के पश्चात् दोनों नासारन्ध्रों से शनैः शनैः नियमानुसार रेचक करें। इसी प्रकार प्रारम्भ में १० प्राणायाम करें। अभ्यास करते-करते ५० तक प्रत्येक बार कर सकते हैं। शीतकारी प्राणायाम की भाँति शीतली प्राणायाम भी ग्रीष्मऋतु में १२५ संख्या तक किया जा सकता है।

लाभ – शीतकारी प्राणायाम की भाँति यह भी शरीर को ठंडा रखता है; तृषा मिटाता है; प्रदाह, पित्त-प्रकोप, अम्लपित्त दोष नष्ट करता है। प्लीहा, संग्रहणी, पेचिश, उदर-वायु-विकार, मंदाग्नि दोष दूर करता है। क्षुधा बढ़ाता है, सिर में अतिरिक्त प्रदाहजनित अस्थिरपन तथा उन्माद (पागलपन) रोगों के लिए भी लाभदायक है।

विशेष सूचना –

शीतकारी प्राणायाम की भांति शीतली प्राणायाम भी शीतऋतु में अनुकूल नहीं रहता है। सर्दी, जुकाम, दमा तथा श्वास रोगग्रस्त लोगों के लिए यह प्राणायाम वर्जित है।
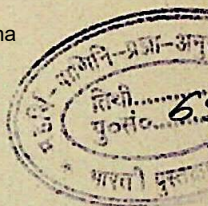
भस्त्रिका

विधि –

१. यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दाहिना नासारन्ध्र बन्द करके वाम नासारन्ध्र से १० बार घर्षण अर्थात् लोहार की धौंकनी की भाँति जल्दी-जल्दी रेचक पूरक करें। ११वीं बार में उस नासारन्ध्र से नियमानुसार पूरक करें। निर्दिष्ट समयानुसार कुंभक करके दाहिने नासारन्ध्र से शनैः शनैः क्रमानुसार रेचक करें। पुनः दाहिने नासारन्ध्र से पूर्ववत् १० बार घर्षण करके ११वीं बार में उसी नासारन्ध्र से नियमानुसार पूरक करें एवं निर्दिष्ट समय तक कुंभक करके वाम नासारन्ध्र से शनैः शनैः क्रमानुसार रेचक करें।

२. यथाविधि आसन पर बैठ जायें। पहले दाहिने नासारन्ध्र से वाम नासारन्ध्र की ओर १० बार घर्षण करके विधिपूर्वक वाम नासारन्ध्र बंद करके दाहिने नासारन्ध्र से नियमानुसार पूरक करके जालन्धरबन्ध लगावें एवं कुंभक करें। निर्दिष्ट समय के पश्चात् जालन्धरबन्ध खोलकर दाहिने नासारन्ध्र से शनैः शनैः नियमानुसार रेचक करें। पुनः पहले के विपरीत वाम नासारन्ध्र से दाहिने नासारन्ध्र की ओर १० बार घर्षण करके ११वीं बार में विधिपूर्वक दाहिना नासारन्ध्र बन्द करके वाम नासारन्ध्र से नियमपूर्वक पूरक करके जालन्धरबन्ध लगावें। निर्दिष्ट समय तक कुंभक करने के पश्चात् जालन्धरबन्ध खोलकर दाहिने नासारन्ध्र से शनैः शनैः नियमपूर्वक रेचक करें।

यह प्राणायाम हठयोग-सिद्धि अर्थात् कुण्डलिनी-शक्ति जागृत करने में प्रमुख सहायक है। इस विषय पर विस्तृत विवरण लेखक की "कुण्डलिनी योग" नामक पुस्तक में दिया गया है।

प्रतिक्रिया – इस प्राणायाम को विधिपूर्वक सही रूप में किया जाय तो कुंभक बहुत बढ़ जाता है, किन्तु इस प्रलोभन में प्रलोभित होकर अत्यधिक न करें। क्योंकि अधिक करने से फुफ्फुस कोष पर आघात पड़ने की संभावना बनी रहती है। इसीलिए अधिक नहीं करके एक साथ ५-१० तक ही करें।

लाभ – भस्त्रिका प्राणायाम समशीतोष्ण है। अतः इसे सभी ऋतुओं में किया जा सकता है। इस प्राणायाम में वात, पित्त, कफ आदि की विकृति से उत्पन्न रोग-समूह प्रशमित हो जाते हैं। सर्दी, जुकाम, सिरदर्द के लिए उत्तम साधन है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। वीर्यवहा नाड़ी की ऊद्ध्वंगति होती है। ब्रह्मचर्य पुष्ट होता है। स्वप्नदोष दूर होता है। शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सब प्रकार के दोषों से मुक्त होकर साधक पवित्र, सुन्दर, कांतियुक्त तथा लावण्यमय बन जाता है।

विशेष सूचना – हृदय रोग (Heart trouble) तथा उच्च रक्तचाप (High blood-pressure) ग्रस्त लोगों के लिए यह प्राणायाम वर्जित है।

भ्रामरी

विधि सं० १ – यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दाहिना नासारन्ध्र बंद करके भ्रमर के नाद अर्थात् गुंजन जैसे स्वर सहित वाम नासारन्ध्र से पूरक करके जालन्धरबन्ध लगाकर पूरक के क्रम के अनुसार कुंभक करें। निर्दिष्ट समय तक कुंभक करने के पश्चात् जालन्धरबन्ध खोलकर वाम नासारन्ध्र बन्द रखते हुए दाहिनेनासारन्ध्र से पूर्ववत् भ्रमर गुंजन की भांति स्वर सहित रेचक करें। फिर विपरीत नासारन्ध्र से भी इसी प्रकार करें।

(२) यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दोनों नेत्र बन्द करके भ्रूमध्य अन्तर्दृष्टि रखते हुए जालन्धरबन्ध लगा लें। तत्पश्चात् दोनों नासारन्ध्रों से भ्रमर के नाद की भांति स्वर सहित नियम-पूर्वक पूरक करें। पूरक के क्रम के अनुसार कुंभक करने के पश्चात् पूर्ववत् भ्रमर-नाद की भांति स्वर सहित नियमानुसार दोनों नासारन्ध्रों से रेचक करें, इस प्राणायाम के समय जालन्धरबन्ध बराबर लगा रहेगा। प्रारम्भ में दोनों विधियों के १० प्राणायाम ही करें। अभ्यास करते-करते ५० तक बढ़ा सकते हैं।

लाभ – भ्रामरी प्राणायाम के अभ्यास से चित्त में एकाग्रता आ जाती है एवं मन आनन्द से भर जाता है, स्वर-साधक अर्थात् संगीत-अभ्यासियों के लिए यह एक अचूक साधन है। मधुर स्वर में विघ्न होना तथा बिखर जाना, गले में कफ आदि

की विषमता से उत्पन्न दोष दूर करके स्वर को मधुर, सुरीला, हृदयग्राही करने में यह प्राणायाम अद्वितीय है ।

नाद–साधन के लिए यह प्राणायाम उत्तम है। प्राणतत्त्व को अनुधावन करने के लिए इस प्राणायाम के साथ कई मुद्राएं करने की आवश्यकता होती हैं। इस विषय पर "कुंडलिनी योग" नामक पुस्तक में विस्तृत विवरण दिया गया है ।

मूर्च्छा

विधि – यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दोनों हाथों के अंगूठों से दोनों कान, तर्जनियों से नेत्रों की पलकें, मध्यमाओं से नासारन्ध्रों और अनामिकाएं ऊपर के ओष्ठ के ऊपर और कनिष्ठा अंगुलियां नीचे के ओष्ठ के नीचे रखें। दोनों कान और नेत्र पूर्णतया बन्द करते हुए नासारन्ध्रों से विधिपूर्वक पूरक करें एवं जालन्धरबन्ध लगा लें। निर्दिष्ट समय तक कुंभक करने के पश्चात् जालन्धरबन्ध खोलकर दोनों नासारन्ध्रों से शनैः शनैः नियमानुसार रेचक करें। इसी प्रकार प्रारम्भ में ५ प्राणायाम ही करें। अभ्यास करते-करते ५० तक कर सकते हैं।

लाभ – चित्त की एकाग्रता लाने में यह प्राणायाम बड़ा सहायक है। साधारणतया मूर्च्छा प्राणायाम उच्चतर साधना के लिए ही किया जाता है। इससे सिद्धसाधक क्षिति, अप, मरुत, तेज, व्योम के विभिन्न रंगों, जैसे पृथ्वी का पीला रंग, जल का श्वेत रंग, वायु का हरा रंग, तेज का लाल रंग और आकाश का नीला रंग, का प्रत्यक्ष रूप में दर्शन करके उनके तत्व का प्रत्यक्षीकरण करते हैं।

विशेष सूचना –

इस प्राणायाम के समय शरीर के नौ द्वार बन्द हो जाने के कारण बाहर से वायु का आवागमन बिलकुल बन्द हो जाता है, जिससे सिर में चक्कर आकर मूर्च्छा आ जाने की संभावना

रहती है। अतः साधारण लोग केवल प्राणायाम करने का उद्देश्य लेकर प्राणायाम न करें। उच्चतर साधना के लिए अभ्यासी साधक भी अपना रक्तचाप (Blood-pressure) हृदय (Heart) उदर-वायुविकार (Gastric troubles) आदि विषय समूह की दुर्बलता से निःसन्देह होकर अभ्यास करें, वरना नहीं करना चाहिये।
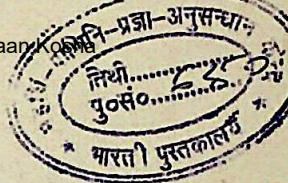
प्लावनी

विधि–

(१) यथाविधि आसन पर बैठ जायें। दोनों हाथों को स्कन्ध से ऊपर की ओर उठाते हुए सीधे रक्खें। अब दोनों नासारन्ध्रों से पूरक करते हुए दोनों हाथों को समेटकर सिर के नीचे तकिये की भांति रखकर सीधे सो जायें एवं कुंभक करें। निर्दिष्ट समय के पश्चात् दोनों नासारन्ध्रों से शनैः शनैः क्रमानुसार रेचक करें। प्रारम्भ में १० प्राणायाम ही करें। अभ्यास करते-करते १२५ तक ले जाया जा सकता है।

(२) यथाविधि आसन पर बैठ जायें। नाभि-विन्दु पर मन को एकाग्र करते हुए दोनों नासारन्ध्रों से पूरक करते-करते वायु से पेट पूर्ण कर दें। तत्पश्चात् पेट को चारों ओर से मसक की भांति फुलाकर यथाशक्ति कुंभक करके दोनों नासारन्ध्रों से रेचक करें।

लाभ–

यह भी उच्चतर साधना तथा शरीर को रूई की भांति हल्का बनाने के लिए किया जाता है जिससे जल में मछली की भांति तैरने, जल पर तथा शून्य मार्ग पर चलने आदि की योग्यता प्राप्त हो जाती है। किन्तु ऐसी स्थिति सहज लभ्य नहीं है। इसके लिए और अनेक साधना – अभ्यास की आवश्यकता है। इस विषय में पहले भी उल्लेख किया गया है।

उपसंहार

पुस्तक का उपसंहार करते हुए उन आध्यात्मिक अभ्यर्थियों की आकांक्षा को मर्यादित करने का प्रयास कर रहा हूँ जिन्होंने 'प्राणायाम' को स्वास्थ्य-लाभ के परे रखना चाहा है। इस संदर्भ में मैंने 'अष्टांग योग में प्राणायाम अध्याय' में उल्लेख किया है कि आध्यात्मिक महत्त्व मेरी कुण्डलिनी नामक पुस्तक में परिवेशित हुआ है तथापि निवेदन है कि साधक प्रस्तुति से लेकर प्राणायाम के लिये आसन पर उपवेशन तक के समय अपने मन को विविध विचारों या संघर्ष से उपराम करते-करते अन्तराभिमुखी करने का प्रयास करें एवं उपविष्ट होते ही मूलबन्ध लगाकर 'ॐ' या अपने 'इष्ट देवता' के नाम का जप करते रहें – साथ ही निर्दिष्ट प्राणायाम भी। जब कुम्भक की स्थिति अच्छी अर्थात् बढ़ जावेगी तब 'ॐ' का अवयव या 'इष्ट देवता' की मूर्ति को अपने हृदय-मन्दिर में अवलोकन करने में सचेष्ट रहें। प्रारम्भ में मन में नाना विचारों का समावेश होना अशक्य नहीं है; किन्तु साधक उपर्युक्त समावेश को अग्राह्य करके साधनाक्रम पर दृढ़ रहें तो धीरे-धीरे अपना मन-हृदय तथा अन्तरात्मा को राहु-ग्रास-मुक्त सूर्यकिरण में उद्‌भासित देख पायेंगे। शारीरिक स्वास्थ्य-लाभ एवं आध्यात्मिक उन्नति के शिखर तक पहुँचने में साधक समर्थ होंगे।

ॐ सह नाववतु।

...ह है। शायद
...न कानपुर की
...लिए इन टेनरियों
...धिक चिन्ता व्यक्त की

उत्तर
कम ही
...अन्य गम्भीर रोग उत्पन्न

आज ... स्थिति कानपुर की भी एक लम्बे अर्से से चल रही है। कानपुर आज भी अनेक ग... केन्द्र बना हुआ है और आज भी कानपुर अन्तर्राष्ट्रीय जगत में अगर किसी वजह... वजह यह है कि इस नगर में औद्योगिक प्रदूषण से सम्बन्धित रोग बहुत अधिक... बात यह है कि आज तो राज्य सरकार के अनेक विभाग स्वयं भी भारी प्रदूषण फैल... विद्युत परिषद संभवतः सर्वाधिक सक्रिय है। कानपुर में ही जिस तरह से रिवर... भयंकर प्रदूषण फैलाया जा रहा है और उस पर सरकार की जो चुप्पी है, वह ... चिन्ता का विषय है।

प्रदूषण की समस्या आज केवल कानपुर और उन्नाव की ही नहीं है। उ... औद्योगिक नगर गाजियाबाद में भी जो प्रदूषण फैल रहा है, उस पर भी भारी चि... चाहिए, पर सरकार ने इस संदर्भ में कोई बहुत ठोस काम आज तक नहीं किय... ग्रसित है ही और उसके कारण ताजमहल सरीखे भव्य ऐतिहासिक और पुरात... खतरा उत्पन्न हो चुका है। इलाहाबाद और बनारस भी प्रदूषण से कोई कम ग्रस... के प्रदूषण को रोकने के लिए अनेक योजनाएं बनायी गयी और काम भी हुआ पर... भी प्रदूषित है। समझ में नहीं आ रहा है कि प्रदूषण के संदर्भ में इस राज्य के प्र... जागृत कैसे किया जाये। आज प्रदूषण रोकने के लिए जैसी इच्छा शक्ति राजनी... वैसी इच्छा शक्ति उनमें नहीं दिखायी देती। प्रदूषण एक ऐसा विषय है, जिसक... पड़ता है। अगर हमारे देश का मतदाता भी अमेरिका व अन्य विकसित देशों... और प्रदूषण को महत्व प्रदान करता होता, तब इन राजनीतिज्ञों की इतनी हि... अनिच्छा या उपेक्षा ... निच्छा का परिचय वे आज दे र...

...रखने का इतना अधिक अभ्यस्त
...देता है और न जल प्रदूषण
...त्य हो चुके हों। पर प्र
...जो सत्ता में बैठे हु
...कि सरकार
...में झोंक
...जा रहे

१. हठयोग प्रद...
२. कल्याण यो...
३. टेक्स्ट-बुक ... फिजियोलॉ...
४. मानव शरी...
५. हमारे शरी...

4. Mr. E D Bains,
5. Mr. R C Rai, Reserve
6. Dr. R K Singh. Advi...

VENUE: HO...

Date:
Time:
Registra...
Date:
Time:
Regis...

दनहीनता
अनेक वर्षों
भी बहुत
यी है, पर
में प्रदूषण
वरण मंत्री
नकी बातों
कि आज
ल प्रदूषण
या गया।
ने आप में

र ऐसी ही:
बहुत बड़ा
है तो वह
श्चर्य की
नमें राज्य
उस द्वारा
क गम्भीर

विकसित
को होनी
प्रदूषण से
मारक को
स में गंगा
तरह अब
वास्तव में
चाहिए,
र नहीं
ल होता
क वे वैसी
यह है कि
उसे न तो
से हमारे
कि यदि
वेदनहीन
नागरिकों
कारण जो
त रहना
पर्यावरण
बहुत ही
करने में
संदर्भ में

मेरे विचार आकाश में भटकने लगे जो हमारे पड़ोसी पाकिस्तान के साथ संबंधों में प्रधान-मंत्री के प्रति साफगोई रहे, उन्होंने दो सप्ताह पहले हमें युद्ध के प्रति मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार रहने को कहा था- खुलें आकाश का कोई आश्वासन नहीं लेकिन युद्ध के बादलों की संभावना है। क्या गरजने और चमने के बाद ये बादल शांतिपूर्ण चले जायेंगे? अथवा हम प्रलय की तरफ अग्रसर है? भगवान बचाये। लेकिन हमें जो कुछ बताया गया है उससे अधिक जानने का हक है। राज नारायण केस के अपने ऐतिहासिक फैसले में न्यायमूर्ति मैथ्यू ने कहा था, कि "इस देश की जनता को प्रत्येक सार्वजनिक कार्य की जानकारी का अधिकार है, सब कुछ जो सार्वजनिक रूप से उनके सार्वजनिक कर्मियों द्वारा किया जाता है। उन्हें प्रत्येक आचरण का ब्यौरा जानने का अधिकार है।" १९८१ में दिये गये दूसरे फैसले में उच्चतम न्यायालय ने कहा था, कि "खुली सरकार के सिद्धान्त की तिथि उत्पत्ति जानकारी के अधिकार से है जो संविधान की धारा १९ के अन्तर्गत दी गई विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति में निहित है।"

अपने और पाकिस्तान के विदेश मंत्री तथा अपने और पाकिस्तान के प्रधानमंत्री के बीच बातचीत की क्या स्थिति है, हम यह नहीं जानते हैं लेकिन हमें इस विषय में जानने का हक है। उनके बीच हॉट लाइन टेलीफोन है। उन्होंने एक दूसरे से क्या बातचीत की है? क्योंकि हमारी समान सीमाओं के दोनों ओर फौज का जमाव जारी है और उन्हें इतना पीछे क्यों किया जा रहा है कि वे एक दूसरे पर सीधे आक्रमण की स्थिति में न रहे? हमारी सेनाओं के बीच सीमा पर झड़प पहले ही हो चुकी है, क्या अभी और झड़पें होंगी?

हमारी दुर्दशा का सटीक वर्णन मैथ्यू आर्नोल्ड द्वारा 'डोवर बीच' में किया गया है-

सम्पन्न दूसरे लोगों के बढ़ते चले जाने ने देश के दुकानदारों को अपनी दुकान शनिवार शाम देर तक और कुछ उपनगरों में रविवार को खुली रखने के लिए फुसला लिया है। गर्म धूप भरे दिन.
अप
ले,
खूब

खर
के
अ
के
हल
दि
वि
अं

छ. फुट ... पूर्व बंबई में तब मिला था जब वो कनाडा रेडियो और टेलीविजन के लिए भारत पर कार्यक्रम बनाने की संभावना का पता लगाने आई थी, इस समय वेक्ष टोरन्टो से ग्लासगो समारोह में भाग लेने आई हुई है। वह सी.बी.सी. से अवकाश ग्रहण कर चुकी है लेकिन सलाह देने और अध्यापन का काफी कार्य करती है। वह शाकाहारी और स्वास्थ्यप्रद भोजन की ओर आकर्षित हो चुकी हैं, सिगरेट छोड़ चुकी हैं और शराब नहीं पीती। जानवरों के प्रति उनका प्रबल अनुराग है और जो भी कुत्ता दिख जाए उससे बात करने लगती हैं। उनके दिन के भोजन में दही और केला है। जबकि मैं दोपहर को विश्राम कर रहा था वह लंदन की पैदल खोज कर रही थी। वे पोल टैक्स के विरोधियों से टकरा गई और उनके और पुलिस के बीच ट्रेफलगर स्क्वायर पर हु[ई] झड़प की खबर लेकर आई। हम टेलीविजन प[र] ऑक्सफोर्ड कैम्ब्रिज नौका दौड़ देखते हैं। ऑक्सफोर्ड लगातार १६वीं बार विजयी होता है।

अन्तर्राष्ट्री